vinoba

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक– साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १५ अंक : २६

सोमवार ३१ मार्च, '६९

अन्य पृष्ठों पर

ऊपर नहीं, नीचे —खादिम ३१४

'निराशा का दर्शन' —सम्पादकीय ३१५

ग्रामदान-आन्दोलन···
···परिवर्तन के लिए—विनोबा ३१६

गांधी-जीवन का नया बोध
—शंकरराव देव ३१८

अन्याय और अवगुणों से मुक्ति
का मार्ग —धीरेन्द्र मजूमदार ३१९

संस्था, सेवक और सेव्य
—अण्णा सहस्रबुद्धे ३२१

जर्मनी के क्रान्तिकारी डा० हान्स...
—हरिगोविन्द त्रिपाठी 'पुष्प' ३२३

आत्म-समर्पणकारी बागियों के जीवन
का नया अध्याय —गुरुशरण ३२४

विनोबा-निवास से ३२५

आन्दोलन के समाचार ३२७

सम्पादक
राममूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी–१, उत्तर प्रदेश
फोन : ४१२८५

अर्थशास्त्र : झूठा और सच्चा

अर्थशास्त्री यह सोचने में भूल करते हैं कि किसी राष्ट्र के लिए स्पर्धा या होड़ अच्छी है। स्पर्धा से सिर्फ खरीददार को मजदूर की मजदूरी अन्यायपूर्ण ढंग से सस्ती मिल जाती है। नतीजा यह होता है कि धनवान अधिक धनी और निर्धन अधिक गरीब बनते हैं। अन्त में इसका परिणाम राष्ट्र के लिए विनाशकारी ही हो सकता है। मजदूर को अपनी योग्यता के अनुसार न्यायपूर्ण मजदूरी मिलनी चाहिए। तब भी एक प्रकार की स्पर्धा तो होगी ही, परन्तु लोग सुखी और कुशल होंगे, क्योंकि उन्हें मजदूरी पाने के लिए एक-दूसरे से कम-से-कम दर पर काम नहीं करना पड़ेगा, बल्कि उन्हें रोजगार हासिल करने के लिए नये-नये कौशल प्राप्त करने होंगे। सरकारी नौकरियों के आकर्षक होने का यही रहस्य है, क्योंकि उनमें वेतन ऊँचे नीचे पदों के अनुसार मुकर्रर होता है। उनके लिए एक उम्मीदवार दूसरे से कम तनख्वाह लेने का प्रस्ताव नहीं करता, परन्तु यही दावा करता है कि वह अपने प्रतिस्पर्धियों से अधिक योग्य है। जल और स्थल-सेना में भी यही हाल है, जहाँ बहुत थोड़ा भ्रष्टाचार है। परन्तु व्यवसाय और उद्योग में हद दर्जे की प्रतिस्पर्धा है और उसका परिणाम धोखेबाजी, धूर्तता और चोरी में आता है। रद्दी माल तैयार किया जाता है। उद्योगपति, मजदूर और खरीददार सब अपने-अपने स्वार्थ का ध्यान रखते हैं। इससे सारा मानव-व्यवहार विषैला हो जाता है। मजदूर भूखों मरते हैं और हड़ताल कर देते हैं। कारखानेदार मक्कार बन जाते हैं और ग्राहक भी अपने आचरण के नैतिक पहलू की उपेक्षा करते हैं। एक अन्याय से दूसरे अनेक अन्याय पैदा होते हैं और अन्त में मालिक, मजदूर और ग्राहक, सब दुखी होकर बरबाद हो जाते हैं।

सच्चा अर्थशास्त्र न्याय का अर्थशास्त्र है। लोग जितने न्याय करना और सदाचारी बनना सीखेंगे उतने ही सुखी होंगे। और सब बातें न केवल व्यर्थ हैं, बल्कि सीधी विनाश की ओर ले जानेवाली हैं। येन केन प्रकारेण लोगों को धनवान बनना सिखाना उनकी महान कुसेवा करना है।[1]

जो अर्थशास्त्र धन की पूजा करना सिखाता है और कमजोरों को हानि पहुँचाकर सबलों को दौलत जमा करने देता है, वह झूठा और भयानक अर्थशास्त्र है। वह मृत्यु का दूत है। इसके विपरीत सच्चा अर्थशास्त्र सामाजिक न्याय की हिमायत करता है, सबकी—जिनमें दुर्बल से-दुर्बल भी शामिल है—समान रूप से भलाई चाहता है और सभ्य जीवन के लिए अनिवार्य है।[2]

मो. क. गांधी

(१) गांधीजीज पैराफ्रेज आव 'अन्टु दिस लास्ट', पृष्ठ : ५०-५३

(२) "हरिजन" : ९–१०–३७।

सामयिक चर्चा

ऊपर, नहीं, नीचे

लोग, जानकार लोग, कहने लगे हैं कि भारत की राजनीति में किसी एक बड़े दल की सरकार के दिन खत्म हो गये; अब हैं संविद सरकारों के दिन, जो अभी वर्षों तक रहेंगे। वे यह भी कहते हैं कि जैसे-जैसे दिन बीतेंगे दलों की संख्या घटेगी, और राजनीति की दक्षिणपंथी, वामपंथी, मध्यवर्ती धाराएँ निखरकर ऊपर आयेंगी। इस निखार के होने पर लोकतंत्र सुपरिचित रास्तों से आगे बढ़ेगा। तो, क्या राजनीति चाहती है कि देश उसके निखार की प्रतीक्षा करे?

मध्यावधि चुनाव के बाद पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार और पश्चिमी बंगाल, हर जगह ऐसी ही सरकारें बनी हैं जो किसी-न-किसी रूप में मिली-जुली हैं। पंजाब में और पश्चिमी बंगाल में मेल जोल बहुत कुछ चुनाव के पहले ही हो गया था। लेकिन उत्तर प्रदेश और बिहार में 'मिलाने' की क्रिया-प्रक्रिया चुनाव के बाद शुरू हुई। इस मिलाने को राजनीति के लोग चाहे जो नाम दें, पर जनता को वह सौदेबाजी से भिन्न दूसरी कोई चीज दिखाई नहीं देती। क्या चुनाव लड़ने में, क्या सरकार बनाने में, और क्या विभागों के बँटवारे में, लगता है जैसे राजनीति में शायद ऐसा कोई काम रह ही नहीं गया है जो सौदेबाजी के बिना भी चल सकता हो। कुछ लोगों का कहना है कि ये विकार गंभीर तो हैं, किन्तु टिकाऊ नहीं हैं। अभी संविद सरकार का शास्त्र विकसित नहीं हुआ है। उसमें कुछ समय लगेगा। उसका लगना जरूरी है। तब तक हमें बुराइयाँ बर्दाश्त करनी पड़ेंगी।

अगर बात इतनी ही होती तो कोई बात नहीं थी। बात तो सचमुच बहुत गहरी है। देश की राजनीति तेजी के साथ अपना स्वरूप बदल रही है। इतना ही नहीं, स्वरूप बदलने के साथ-साथ जन-जीवन से अपने को अलग भी करती जा रही है, और इस नाते अपनी बची-खुची रचनात्मक शक्ति भी तेजी के साथ खो रही है। जनता यह देख रही है कि सरकार बनाने के लिए जो 'कोएलिशन' बन रहे हैं, उनमें नीयत यही है कि मिलकर सत्ता पर कब्जा किया जाय और उससे मिलनेवाले अवसरों और सुविधाओं से दल का हित साधा जाय। दल के लिए लाभ उठाया जाय, या खुद अपने लिए लाभ उठाया जाय, सार्वजनिक जीवन की दृष्टि से दोनों में कोई खास अंतर नहीं है। राजनीति के 'कोएलिशन' के पीछे वही प्रेरणा दिखाई देती है, जो आर्थिक क्षेत्र के 'कारपोरेशन' के पीछे रहती है। कोएलिशन कोई दलपतियों की शक्ति से बनते हैं, और कारपोरेशन कोई पूँजीपतियों की। आधार दोनों में निहित स्वार्थ का ही है। दोनों 'स्टेटस को' को मानकर चलते हैं।

सत्ता केन्द्रित हो, भले ही वह एक पार्टी के हाथ में रहे या मिली-जुली पार्टियों के; उसी तरह पूँजी केन्द्रित हो, भले ही वह एक पूँजीपति के हाथ में रहे, या अधिक पूँजीपतियों के; क्या हाथों की संख्या घटने-बढ़ने से कोई गुणात्मक अंतर पड़ता है? जनता को अब संख्या से संतोष नहीं है, वह भीतर का गुण देखना चाहती है। वह पिछली संविद सरकारों का जमाना देख चुकी है। वह जान चुकी है कि बाहरी चेहरे बदलने से भीतरी शक्ल नहीं बदलती।

शकल कब बदलेगी, और कैसे बदलेगी? इस प्रश्न का संविद की राजनीति के पास भी क्या उत्तर है? संविद सरकारें भी अपने को चलाने के सिवाय दूसरा क्या करेंगी? संविद सरकारें बुनियादी प्रश्नों पर सामान्य सहमति (कन्सेन्सस) से बन रही हैं या मात्र सौदेबाजी से? हम देख रहे हैं कि आज समाज में सुख-सुविधा के सीमित साधनों और अवसरों के लिए भयंकर छीना-झपटी छिड़ी हुई है। लोग जाति, धर्म, क्षेत्र, वर्ग या दल के नाम में संगठित होकर सरकार में घुसना चाहते हैं, और सरकार के हाथों में केन्द्रित साधनों का अपने और अपने समुदाय के लिए इस्तेमाल करना चाहते हैं। इस छीना-झपटी से लोग प्रगति की दौड़ में आगे बढ़ना चाहते हैं। कोई संविद सरकार से किसी जाति या वर्गविशेष को लाभ भले ही पहुँच जाय लेकिन सम्पूर्ण समाज के लिए किसीके पास क्या योजना है? जो भी होगा वह न्याय नहीं होगा; एक हित को बढ़ावा देकर दूसरे हितों का दमन किया जायगा। देश दिनोंदिन हित-संघर्ष में पड़ता चला जायगा।

देश के लाखों गाँवों की मुक्ति का रास्ता दूसरा है। वह यह है कि सरकार के हाथ में, चाहे वह एक दल की हो या संविद हो, जो अधिकार और साधन केन्द्रित हो गये हैं वे उसके हाथ से निकलें और गाँव-गाँव में फैलें। इसके विपरीत आज सरकार यह योजना बनाती है कि पहले साधनों को अपने हाथ में केन्द्रित करे, और उसके बाद उसका बँटवारा करे। इसका नतीजा यह होता है कि साधनों का बहुत बड़ा अंश बटोरने और बाँटने में ही निकल जाता है और जो बचता है वह सरकार के समर्थकों के हाथ में चला जाता है।

गाँवों की मुक्ति का रास्ता साफ कैसे हो? पाकिस्तान ने सिद्ध कर दिया है कि तानाशाही निकम्मी होती है, और भारत ने सिद्ध कर दिया है कि नेताशाही अस्थिर और कमजोर होती है। विकल्प है जनता का संगठन—ग्राम-संगठन; जिसमें लोकशक्ति का बुनियादी स्वरूप प्रकट हो सकेगा। ऐसी बुनियादी इकाइयों के हाथ में शक्ति और साधन जाने चाहिए। समस्या का हल ऊपर के संविद में नहीं, नीचे की संगठित ग्राम इकाइयों में है। एक बार समाज को दलों में बाँटा जाय और फिर संविद बनाया जाय, तो क्या उससे अच्छा यह नहीं होगा कि गाँव को 'एक' माना जाय और उसे एक ही रहने दिया जाय?

—खादिम

संघ-अधिवेशन की तिथियों में परिवर्तन

सर्व सेवा संघ का अधिवेशन कुछ अनिवार्य कारणों से अब २५, २६, २७ अप्रैल '६९ की जगह २३, २४, २५ अप्रैल को तिरुपति (आंध्र प्रदेश) में ही होगा। तिरुपति के लिए द० रेलवे के गुडूर स्टेशन से रेनीगुण्टा जाना होगा। वहाँ से तिरुपति १२ कि० मी० है। रेनीगुण्टा से तिरुपति के लिए रेलमार्ग भी है।

'निराशा का दर्शन'

किसी विदेशी पत्रकार ने कहा था कि भारत एक नहीं छः क्रान्तियों के लिए पककर तैयार है, लेकिन आश्चर्य है कि एक क्रान्ति भी नहीं हो रही है। डा० लोहिया कहा करते थे कि आज ही क्या, पिछले पन्द्रह सौ वर्षों से भारत में कोई विद्रोह तक नहीं हुआ है। उनकी शिकायत थी कि भारतीय भूखा है, नंगा है, अन्याय और विषमता का मारा हुआ है, लेकिन असन्तुष्ट नहीं है। किसी भी स्थिति में वह यह नहीं कहता कि बस, अब यह बर्दाश्त के बाहर है। न जाने कैसे वह अपने दिमाग को परिस्थिति से अलग कर लेता है, और किसी तरह जी लेने में ही धन्यता का अनुभव करता है।

ऐसा क्यों है? क्या जाति-प्रथा ने हमें यथास्थितिवादी बना दिया है? क्या उसके कारण ऐसे संस्कार बन गये हैं कि हमने विषमता और अन्याय को जीवन-पद्धति के रूप में स्वीकार कर लिया है? डा० लोहिया बार-बार पूछते थे : क्या भारत में भी कभी क्रान्ति होगी?

स्वतंत्रता के पहले देश में आदर्श और जीवन के ऊँचे मूल्यों के लिए तकलीफ उठाने की एक हवा थी। बहुत व्यापक तो नहीं थी, फिर भी थी। लेकिन देश के स्वतंत्र होते ही वह हवा जैसे खत्म-सी हो गयी। हमारा नया शासक, जिसने कभी देश के लिए त्याग किया था; तकलीफ झेली थी, भोगवादी बन गया। खुद तो भोगवादी बना ही, सारे देश को, विशेष रूप से युवकों को, भोगवादी बना दिया।

लेकिन यह बात नयी नहीं थी। हमारे देश में सत्ता के इर्द-गिर्द रहनेवाले लोगों ने कभी भी जीवन की ऊँची मिसाल नहीं रखी है। पिछले हजार-डेढ़ हजार वर्ष का इतिहास साक्षी है। पठान गये, मुगल आये; मुगल गये, मराठा आये; अन्त में मराठा भी गये, और अंग्रेज आये। सत्ता के अधिकारी बदलते रहे, किन्तु दरबार के पुजारी जहाँ के तहाँ बने-रहे। फारसी हो या अंग्रेजी, उन्हें दरबार की भाषा बोलनी थी, जिसे वे बोलते रहे, और दूसरों को सिखाते रहे।

स्वतंत्रता के बाद भी हमारे शासक-समुदाय में कोई गुणात्मक परिवर्तन नहीं हुआ। उसने अपनी पुरानी ऐतिहासिक विशेषता कायम रखी। नये प्रभाव में वह नये विचार तो ग्रहण करता रहा, लेकिन अधिकारों को अपने ही हाथ में रखा, समाज पर अपने आधिपत्य को ढीला नहीं होने दिया। पिछले बाईस वर्षों में देश में राजनैतिक नेतृत्व का जिस तरह विकास हुआ है, उससे यह सिद्ध होता है कि हमारे नेता समाज के बुनियादी परिवर्तन के लिए तैयार नहीं थे। इतिहास का कितना क्रूर किन्तु सही व्यंग्य है कि जो कभी अन्याय से जूझते हैं वे आगे चलकर 'स्टेटस को' के पुजारी बन जाते हैं!

ऐसी स्थिति में अगर निराशा, अनास्था और अविश्वास का दर्शन बन जाय तो आश्चर्य क्या है? डा० लोहिया स्वयं इस दर्शन से प्रभावित हो जाते थे, और कहते थे कि सत्ता में जाकर उनका अपना दल शायद अपनी आदर्शवादिता कायम नहीं रख सकेगा। इसलिए वह चुनाव लड़ने के साथ एक जन-आन्दोलन की कल्पना किया करते थे। उनका पहला प्रहार जाति-प्रथा पर होता था, और वह ऐसी क्रान्ति चाहते थे जिसमें नीचे के दबे हुए लोगों को तरजीह मिले। इसे वह 'प्रेफरेंशियल रेवोल्यूशन' कहते थे। लेकिन अब इतने वर्षों के बाद कहाँ है करोड़ों को आन्दोलित करनेवाला वह आन्दोलन, और कहाँ है 'स्टेटस को' को हिलानेवाली वह क्रान्ति जिसकी प्रेरक शक्ति डा० लोहिया अपने दल को बनाना चाहते थे? उनका दल भी, इतिहास के क्रूर व्यंग्य का शिकार हो गया!

निराशा के कारणों की कमी नहीं है, लेकिन क्या निराशा का कोई उत्तर भी है? क्या राजनीति के पास है, चाहे वह दलों की राजनीति की राजनीति हो, चाहे किसी तानाशाह की? विज्ञान और लोकतंत्र के इस युग को जिस क्रान्ति की भूख है वह पहले की क्रान्तियों से भिन्न है—बहुत भिन्न। आज तक के जितने भी क्रान्तिकारी आन्दोलन हुए हैं उन सबका लक्ष्य रहा है षडयंत्र और हिंसा द्वारा सत्ता-परिवर्तन। विशुद्ध वर्ग-संघर्ष द्वारा अभी तक कोई क्रान्ति नहीं हुई है। यही कारण है कि वोट से बदलनेवाली सरकार के इस देश में साम्यवादी इस दुविधा में है कि वह अपनी 'क्रान्ति' के लिए कौनसा रास्ता अपनाये! वर्ग-संघर्ष का नारा लगानेवाले भी उन वर्गों का वोट माँगते हैं जिनका अंत उनका घोषित लक्ष्य है।

आज का नागरिक पहले की अपेक्षा कहीं अधिक चेतना है, और कहीं अधिक शक्तिशाली है। क्या क्रान्ति के लिए उसकी चेतन और शक्ति का प्रयोग नहीं किया जा सकता? पहले की तरह अब भी हम सत्ता प्राप्त कर लेने के बाद क्रान्ति का सूत्रपात करने की बात सोचते रहेंगे तो आशा का क्या नया स्रोत हमारे हाथ आयेगा?

समाज बदलने के लिए अब नागरिकों का सामूहिक संकल्प जगाये बिना काम नहीं चलेगा। लेकिन संकल्प की प्रेरणा कोई दल नहीं दे सकता। उसके लिए सत्ता-निरपेक्ष क्रान्तिकारी चाहिए। गांधीजी की लोकसेवक की कल्पना में यह क्रान्ति-तत्त्व था। विनोबा उसे चरितार्थ करने का प्रयत्न कर रहे है।

भारत के लम्बे इतिहास में कोई बात है जिसके कारण दो मूलगामी क्रान्तियों का दर्शन यहाँ हुआ है। बुद्ध ने जाति-हिंसा (कास्ट वायलेंस) से विद्रोह किया, और गांधी का तो सारा क्रान्ति-दर्शन ही राज्य-हिंसा (स्टेट वायलेंस) को समाप्त करने का था। बुद्ध ने जाति को मोक्ष में बाधक नहीं माना, और गांधी ने राज्य को नागरिक की मुक्ति में साधक नहीं माना। दोनों ने नागरिक और उसकी चेतना और शक्ति को ही सबसे ऊपर स्थान दिया। देश का लोकमानस बुद्ध और गांधी को भूला नहीं है। इसके विपरीत दूसरे देशों की क्रान्तियों ने शासक बदले, लेकिन अंत में वे सब दमनकारी कल्याणवाद में फँसकर रह गयीं। रूसो और रोब्सपीयर की क्रान्ति ने नैपोलियन को जन्म दिया; लेनिन की क्रान्ति का उत्तराधिकारी स्टालिन हुआ। माओ का भी क्या कोई भिन्न होगा? हर जगह क्रान्ति की उत्तराधिकारी प्रतिक्रान्ति हुई है। अगर इस इतिहास को बदलना हो तो एक बार नागरिक को क्रान्ति का नायक बनाकर देखना चाहिए। उसके सिवाय आशा की दूसरी किरण नहीं है।•

www.vinoba.in

—विनोबा का कार्यकर्ताओं के लिए प्रेरक सन्देश—

क्रान्ति के लिए स्थिर नहीं, गतिशील जीवन की आवश्यकता

ग्रामदान-आंदोलन सिर्फ भलाई के लिए नहीं, परिवर्तन के लिए

हमने आन्दोलन को आरोहण नाम दिया था। आरोहण याने चढ़ना। आरोहण का लक्षण है उत्तरोत्तर काम कठिन होता चला जाय। ग्रामदान-प्राप्ति को एक बहुत ही कठिन काम माना गया था भारत में। दूसरे देश के लोग तो आश्चर्यचकित होते हैं, जब सुनते हैं कि प्रखण्ड-के-प्रखण्ड ग्रामदान में आ रहे हैं। और सारा प्रान्त ग्रामदान में लाने की बात हो रही है। लेकिन यह हमारे आरोहण का सबसे पहला और सबसे आसान चरण है। उसके आगे का चरण, उत्तरोत्तर ऊपर चढ़ना है, इसलिए उत्तरोतर कठिन होता जायेगा। किसीने यह समझा होगा कि हमने बहुत ताकत लगायी, कमजोर हो गये; आज तक बहुत परिश्रम किया तो इससे आगे आसान काम मिलेगा, तो उसे निराश होना पड़ेगा, क्योंकि काम कठिन होता जाता है। लेकिन कठिन होते हुए भी आसान मालूम होगा, क्योंकि इससे पहले भी कठिन काम कर लिया है, तुलनात्मक दृष्टि से कठिन। उससे ताकत बढ़ गयी है। लेकिन हमें उस काम के लायक बनना होगा और अपने जीवन को उसमें ढालना होगा। जहाँ गाँव-गाँव में आप नया जीवन लाना चाहते हैं तो अपना भी नया जीवन बनना चाहिए। गांधीजी ने शब्द दिया था—"नवजीवन"। उस नाम का अखबार भी उन्होंने चलाया। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने भी "नवजीवन रस ढाले" कहा है। सारे समाज का पुराना रूप बदलकर नया रूप लाने की हमारी कोशिश है। तो हमें भी नया रूप लेना होगा। अपना पुराना रूप कायम रखकर समाज को नया रूप कैसे देंगे ?

नवजीवन, नवतर जीवन

एक बार विचार जँच जायेगा तो काम कठिन नहीं मालूम होगा। एक बार स्टेशन पर पहुँच गये तो दिशा बदलती है। कई बार इंजन दिशा बदलता है। यह ध्यान में आ जाय कि हमारे जीवन का अभी तक का तरीका आगे काम नहीं आयेगा। कोई अगर कहेगा कि 'वी आर टू ओल्ड टु चेंज' (हम इतने पुराने हो गये कि बदल नहीं सकते) तो नहीं चलेगा। उन्हें तो कहना होगा कि हमें परिवर्तन की आदत हो गयी है। हम पहले बाल थे, फिर जवान हो गये, जवान थे तो अब बूढ़े हो गये। मृत्यु तक नया-नया रूप हम लेते हैं। मृत्यु के बाद नवजीवन, नवतर जीवन होगा—चाहे इस दुनिया में हो, चाहे दूसरी दुनिया में हो। "नवतरम् कल्याणतरं रूपम्···" आत्मा शरीर का अच्छा उपयोग करता है, सदुपयोग करता है, तो आगे आज के रूप से अच्छा, ज्यादा नया रूप प्राप्त करता है। उपनिषद् में कहा है, 'इसके आगे जो रूप होगा वह नये से भी नया और कल्याणतर रूप होगा।' यह हमें उनके जीवन में देखने को मिला, जो नया-नया रूप लेते गये। ऐसे महापुरुष भारत में हो गये। गांधीजी की मिसाल आपके सामने है। कोई कल्पना नहीं कर सकता था सन् १९३७ में कि १९४२ वाला रूप दीखेगा। और, १९४२ में कोई कल्पना नहीं कर सकता था कि १९४५ का रूप कुछ अलग होगा। १९४४ में जेल से छूटने के बाद उन्होंने अंग्रेज सरकार को नया सूत्र दिया और कहा कि इन सूत्रों (ग्यारह सूत्र) के आधार पर 'काम्प्रोमाइज' (समझौता) कर सकते हैं। एक विदेशी नामानिगार ने उनसे पूछा कि १९४२ में तो आपने "क्विट इण्डिया" कहा था, तो अब 'काम्प्रोमाइज' की बात कैसे करते हैं ? "१९४४ इज नाट १९४२" (१९४४, १९४२ नहीं है)—यह गांधीजी का जवाब था। ऐसा अजीब जवाब था, जिसकी कोई कल्पना कर नहीं सकता था। नित्य नया रूप उनका था। रवीन्द्रनाथ ने ऐसी ही भाषा इस्तेमाल की है। उन्होंने कहा, "नूतन करे नूतन प्राते।" आज नया प्रातःकाल हो, इसलिए नया रूप आपको और हमको प्राप्त करना होगा और वह कल्याणतर होगा।

शास्त्रकारों का हम पर बड़ा उपकार है कि वे हमें जरा चैन से नहीं रहने देते। बच्चा माता-पिता के घर में खुशहाल रहता है। उसे वहाँ से उठा लिया और कहा, 'गुरु के घर जाओ, वहाँ तपस्या करो, पढ़ाई करो, श्रम करो।' गुरु के घर कठिन जीवन की आदत हो गयी, स्थिरत्व प्राप्त हो गया। वेदाध्ययन अच्छा हुआ। गुरु की प्रसन्नता प्राप्त हो गयी तो शास्त्रकार कहते हैं, 'चलो उठो, गृहस्थाश्रम में जाओ या वानप्रस्थाश्रम में। गुरु का आश्रम छोड़ो। गुरु ने समावर्तन कर दिया।' गृहस्थाश्रम में पहले कठिनाई मालूम हुई। अतिथि-सेवा आदि करनी पड़ी। लेकिन घर में धीरे-धीरे आनन्द होने लगा। आदत हो गयी। तो शास्त्रकार कहते हैं, 'चलो उठो, जंगल में जाओ, वानप्रस्थ बनो। उसमें एक जगह, शहर से बाहर रहना होता है। विद्यार्थियों को सिखाना होता है। विद्यार्थी जम जाते हैं। उनका प्यार हासिल होता है।

आसपास के लोग भिक्षा ला देते हैं। इसमें आराम हो गया।" फिर कहा, 'यह छोड़ दो, संन्यास लो। संन्यास में तो घूमना होता है। जहाँ मनुष्य को थोड़ा भी आराम मिलने लगा, वहाँ उसे छोड़ने की आज्ञा हुई। यह हमारे जीवन की रचना है। शास्त्रकारों की कितनी दया है! पंडित नेहरू का तो प्रसिद्ध वाक्य है—'आराम हराम है।' शास्त्रकार हमें आराम से बैठने नहीं देते, यह उनका उपकार है।

गाँव के लिए मित्र, मार्गदर्शक, सेवक

इसलिए अभी तक का जीवन—जिसके हम आदी हो गये, वह हमें बदलना होगा। 'कर ले शृंगार चतुर अलबेली, साजन के घर जाना होगा।' इसलिए हमें ग्रामीणों में जाकर गाँव-गाँव का मित्र, मार्गदर्शक और सेवक बनना होगा। मान लीजिए, यहाँ २५० कार्यकर्ता हैं और ३६-३७ प्रखण्ड हैं, तो हर प्रखण्ड के पीछे ६ या ७ लोग आयेंगे। एक-एक प्रखण्ड में छह-छह आदमियों की योजना करनी होगी। १५-१६ गाँवों के लिए एक कार्यकर्ता और उन सबको इकट्ठा करने के लिए एक आफिस हो, तो प्रति प्रखण्ड २ मनुष्य आफिस में और ५-६ घूमनेवाले। ये गाँव में घूमते रहेंगे, काम कराते रहेंगे, सलाह देते रहेंगे। इसके लिए जीवन में परिवर्तन करना होगा। आज जो व्यवस्था होगी वह बदलनी होगी। मित्र-मण्डली जम गयी है तो वहाँ से उठना होगा और बिखरना होगा। १९१६ में मैंने गांधीजी से एक बात सुनी थी, वह मैं १९६९ में, ५३ साल बाद कह रहा हूँ। साबरमती आश्रम में शाम को बापू घूमते थे। घूमते-घूमते बोले—"देखो विनोबा, हमें यहाँ तैयार होकर गाँव-गाँव में बिखर जाना होगा। ७ लाख गाँव हैं। (उन दिनों पाकिस्तान-हिन्दुस्तान अलग नहीं हुए थे।) ७ लाख लोगों को ट्रेनिंग देना होगा और बिखर जाना होगा।"

भलाई भा, परिवर्तन भी

यहाँ मैंने कल देखी (श्रीकृष्ण-सेवासदन में निवास था) श्री बाबू की जीवनी। १९६१ में वे मर गये। वे मुझसे ८ साल बड़े थे। आज मैं उनकी उम्र में आ गया हूँ। हमारे साथी निकल गये हैं—जिनको जाना था वे भी और जिनको नहीं जाना था वे भी। देश विराना है, रास्ता लम्बा है। आगे न मुंगेर में, न बिहार में, न भारत में रहना है। "यह संसार है कागज की पुड़िया, बूँद पड़े घुल जाना है।" इसलिए हमारे कितने दिन हैं मालूम नहीं! तो जीवन में परिवर्तन करना ही होगा। एक-दूसरे को मदद करनी होगी। जो स्थिर-जीवन के आदी हो गये हैं, उन्हें अस्थिर जीवन लेना होगा। ऋग्वेद में वर्णन है "नवो-नवो भवति जायमानः।"—चन्द्र नया-नया रूप लेता है। तृतीया, चतुर्थी, पंचमी, रोज नया रूप लेता है। स्थान भी बदलता है, रूप भी बदलता है। पूरा परिव्राजक है। नक्षत्र बदलता रहता है। जिस घर में आज है, उस घर में कल नहीं। और जिस रूप में आज है, उस रूप में कल नहीं रहेगा। यह हमने मामूली आन्दोलन शुरू नहीं किया है कि जिससे जनता का 'वेल-फेयर' हो, भला हो। उसमें जनता का भला भी करना है और उसके जीवन में परिवर्तन भी लाना है। रवीन्द्रनाथ ने कहा था, 'हमें वह्नि-स्नान करना होगा।' वह्नि-स्नान याने "ब्लडबाथ", "ब्लडी रेवोलूशन" नहीं। "युगान्तरे वह्नि स्नाने, युगान्तर दिन"—युगान्तर के वह्नि-स्नान से युगान्तर दिन आयेगा। ये सारी कल्पनाएँ हमारे पूर्वजों ने हमारे सामने रखी थीं, इसलिए फिर गाँव में जाकर क्या-क्या करना होगा, यह वहाँ पहुँचने के बाद, याने गाँव में पहुँचने के बाद आपको एकदम सूझेगा।

परिवर्तन की कसौटी ?

गाँव शुरू होता है, यह नाक से मालूम होता है! कहने की जरूरत ही नहीं पड़ती। आमदनी बढ़ाने के लिए क्या करना होगा? (१) गाँव की माँग होगी, तदनुसार निर्णय होगा। (२) आपकी जो योग्यता होगी, तदनुसार निर्णय होगा। नारदमुनि गाँव में जायेंगे तो वीणा चलती रहेगी। (भागवत में वर्णन है कि नारदमुनि की वीणा एक दफा बन्द हो गयी थी। नरसिंह अवतार हुआ तो प्रह्लाद ने कहा—"नाहं बिभेमि" लेकिन नारद की वीणा बन्द हो गयी।) नारद जैसा कार्यकर्ता गाँव में जायेगा तो बच्चों को गाना, नाचना सिखायेगा। बच्चे आनन्द से सीखेंगे और घर में अपनी माँ से कहेंगे, "माँ तुम भी चलो। वह तो साधु पुरुष है। उसके सामने चलने में तुझे कोई हर्ज नहीं!" फिर गाँव की बहनें भी उस कार्यकर्ता के पास जायेंगी। बहनों को भी भजन, कहानियाँ सुनायी जायेंगी। इस तरह गाँव की आवश्यकता और हमारी काबिलियत, दोनों देखकर काम करना होगा। एक ही काम सब गाँव में नहीं होगा। लेकिन कुछ, जैसे पुष्टि के काम हैं, ग्रामसभा इत्यादि बनाने के काम हैं, ये काम हर गाँव में होंगे। पुष्टि-कार्य करने के बाद जिसे जैसा सूझेगा वैसा करना होगा। अनेक ने इसके बारे में लिखा है। बालकोबा जी की एक किताब हैं, किशोरलालजी की एक किताब हैं। लेकिन मेरी एक ही कसौटी रहेगी। जिस त्याग की भावना से गाँववालों ने दान किया वह भावना उत्तरोत्तर बढ़ रही है क्या? कि एक दफा त्याग कर लिया तो बस हो गया, ऐसा सोचते हैं? साधना में आनन्द है, कष्ट, तकलीफ नहीं है। वैसे त्याग में भी आनन्द होता है कि नहीं? त्यागानन्द होता है कि नहीं? गये साल त्याग किया वैसा इस बार भी करने को राजी हैं या नहीं? या एक बार त्याग किया और रोजे कयामत तक वैसे ही रहेंगे, ऐसा सोचते हैं? यह कसौटी है। गाँव में प्रेम-भावना, त्याग-भावना बढ़ रही है यही मुख्य बात है। बाकी उत्पादन बढ़ाना इत्यादि काम तो करते ही हैं। कौन भूखा आदमी होगा, जो 'प्रोडक्शन' नहीं बढ़ायेगा? 'दैट गोज विदाउट सेईंग'—कहने की जरूरत ही नहीं।

मुंगेर : (जिले के कार्यकर्ताओं से)
दिनांक १३-२-'६९

लोकतंत्र : विकास और भविष्य

लेखक : दादा धर्माधिकारी

आचार्य दादा धर्माधिकारी लोकतंत्र, लोकनीति और संस्कृति के अध्वर्यु प्रवक्ता और तलस्पर्शी चिंतक हैं। भारत में लोकतंत्र की स्थिति, उसके भविष्य के परिप्रेक्ष्य में लेखक ने विश्व की राजनीति तथा सम्प्रदायवाद, पूँजीवाद, छुआछूत, संविधान, चुनाव आदि का मार्मिक विश्लेषण प्रस्तुत पुस्तक में किया है। मूल्य : २·५०

सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी-१

गांधी-जीवन का नया बोध

www.vinoba.in

[२ फरवरी '६९ को पूना में महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा के तिलक सभागृह में नासिक के श्री कृ० द० बेदरकर द्वारा लिखित 'सत्याग्रहाची पहिली पावले'—सत्याग्रह के प्रारम्भिक चरण—मराठी पुस्तक का प्रकाशन-समारोह श्री शंकरराव देव की अध्यक्षता में संपन्न हुआ। प्रारम्भ में श्री भाऊ धर्माधिकारी और प्रा० ओतुरकर ने पुस्तक और लेखक का परिचय दिया। बाद में श्री शंकरराव का जो भाषण हुआ, उसका सार यहाँ दिया जा रहा है। —सं०]

शंकरराव देव : जीवन-साधक

शंकरराव देव

यह वर्ष गांधी-जन्म-शताब्दी का वर्ष है। भारत भर में यह शताब्दी मनायी जा रही है। विभिन्न तरीकों से गांधीजी को भारतीयों के सामने प्रस्तुत करने का भगीरथ प्रयत्न हो रहा है। यह जन्म-शताब्दी न सिर्फ भारत में ही, बल्कि दुनिया भर में मनायी जा रही है। पेरिस में आगामी २ अक्तूबर को इस शताब्दी के अवसर पर यूनेस्को की ओर से 'गांधीजी का सत्य, अहिंसा और मानवतावाद', इस विषय पर एक अन्तर्राष्ट्रीय परिसंवाद आयोजित किया जा रहा है। इसमें दुनिया भर के चुने हुए २५ विद्वान भाग लेंगे। यूनेस्को मानता है कि सिर्फ परिसंवाद का आयोजन करने भर से ही काम पूरा हुआ, ऐसा न सोचकर उसके फलस्वरूप एक जागतिक नैतिक आंदोलन शुरू होगा तभी वह परिसंवाद सार्थक माना जायेगा।

गांधीजी ने नया साधन दिया

गांधीजी के दक्षिण अफ्रीका के कार्य को देखने पर भी 'धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे...किमकुर्वत संजय', यह प्रश्न गांधीजी के बारे में पूछा जा सकता है। गांधीजी ने अपने जीवन में क्या बोध दिया, यह सोचने और चर्चा का विषय हो सकता है। किस श्रद्धा से उन्होंने अपने जीवन का प्रयोग किया? 'प्रतिबोधविदितं मतम् अमृतत्वं हि विन्दते'—जागृत होकर ज्ञात हुए विचार से ही अमृतत्व की प्राप्ति होती है। कहा जाता है कि दक्षिण अफ्रीका ने गांधीजी को गढ़ा, तैयार किया और बाद में गांधीजी ने भारत को तैयार किया। दक्षिण अफ्रीका में गांधीजी को जो बोध हुआ, वह सत्य का बोध था। यह बोध मनुष्य को प्रतिक्षण होता रहता है। गांधीजी को जो अमृतत्व प्राप्त हुआ वह सत्य की अखण्ड खोज से हुआ। गांधीजी के जीवन से हमें अगर कोई बोध, सबक लेना हो, तो यह बोध उन्होंने किस तरह हासिल किया इसका परिशीलन होना चाहिए। सत्य के बारे में गांधीजी जो कर सके उसमें अंध-भक्ति नहीं थी। गांधीजी ने जो सत्य के दर्शन किये, उनके पहले और किसीने उसके दर्शन नहीं किये। वह कहते थे कि 'सत्य-अहिंसा के बारे में मैं नया कुछ नहीं बता रहा हूँ।' उनका कहना था, "सत्य-अहिंसा तो पहाड़ों जितनी पुरानी है।" लेकिन उन्होंने उसके जो दर्शन किये और दूसरों को कराये, उसीमें से एक नया साधन दुनिया के सामने वह रख सके।

गांधीजी का जीवन-योग

वह साधन कौनसा है? हमारी भारतीय परम्परा में इस दर्शन के लिए कई साधन बताये गये हैं। गुरु, ग्रंथ, ज्ञानयोग, भक्तियोग, कर्मयोग, ध्यानयोग, ऐसे कई साधनों का उपयोग हुआ और हो रहा है। लेकिन गांधीजी ने सत्य-दर्शन के लिए ऐसे किसी भी साधन का सहारा नहीं लिया। उन्होंने अपनी साधना 'मधुमक्षिका-न्याय' से की है। दुनिया के मानवों पर गांधीजी द्वारा यह महान उपकार हुआ है। अगर गांधीजी सनातन रूढ़ मार्ग से चले होते; गुरु, प्रमाणग्रंथ, तत्त्वज्ञान, योग-मार्ग को पकड़कर उन्होंने सत्य-साधना की होती, तो उनको जो नया सत्य-दर्शन हुआ वह नहीं हुआ होता। 'योग' शब्द का अर्थ है—मेल करनेवाला। गांधीजी ने अपने साध्य से अगर किसीका मेल किया तो वह अपने साक्षात, प्रत्यक्ष जीवन का। उस अर्थ से उनका तो वह 'जीवन-योग' था। जीवन का साक्षात जीवन से हर क्षण मेल याने सम्बन्ध स्थापित करने से वह सनातन सत्य उनके हाथ आया—पुराना ही, लेकिन नये आविष्कार में। उन्होंने जीवन का अपरोक्ष, प्रत्यक्ष सम्बन्ध जीवन से स्थापित किया। मध्यस्थ के रूप में गुरु, ग्रंथ या तत्त्वज्ञान, किसीका भी आधार नहीं लिया और इसमें से उन्हें जो सत्य मिला वह पुराना ही, लेकिन इतने नये रूप में वह प्रकट हुआ कि उस सत्य को पहचानना लोगों के लिए मुश्किल हुआ!

साधना याने जीवन का साक्षात अनुभव

जीवन ही मूलतः सत्य है—यह है गांधीजी का दर्शन। 'सत्य प्रतिक्षण बदलता जा रहा है। उस सत्य से मेरे जीवन का मेल हुआ है, इसलिए सत्य के साथ-साथ मैं भी प्रतिक्षण बदलता रहता हूँ।' यह जीवन-योग है, यह सत्य का साक्षात्कार है। गांधीजी ने कहा कि मेरे पिछले और अभी के विचारों में मेल बनाये रखने के लिए मैं बंधा नहीं हूँ, मैं सिर्फ सत्य से बंधा हूँ। और, अगर पिछला सत्य आगे के सत्य से सुसंगत हो तो मेरे विचारों और आचारों में आप सुसंगति देखेंगे। यह जीवन-योग है। यह सत्य का नित्य-नूतन साक्षात्कार है। नूतन याने अधिक परिशुद्ध, साफ किया हुआ। यह परिशुद्धता कैसे प्राप्त हुई? गांधीजी ग्रंथों के पन्नों में या योग के क्लिष्ट साधनों में नहीं उलझे। जीवन का प्रत्यक्ष अनुभव लेने में वह समरस हुए। जीवन याने एक व्यक्ति का, एक समूह का, एक राष्ट्र का जीवन नहीं, जीवन याने समग्र जीवन।

अहिंसा में समाविष्ट भौतिक प्रेम

पुराना सत्य सीमित था। नया सत्य अगर देखना है तो वह समग्र मानवों में, समग्र

दृष्टि में, पूर्णतः, पूरी आकांक्षा से देखना होगा। उसके लिए हमें मानव के समग्र जीवन—अध्यात्म से लेकर भौतिक तक और जप से लेकर राजनीति तक के समग्र जीवन—को देखना होगा। सत्य का दर्शन सिर्फ बुद्धि तक या विचारों तक सीमित नहीं होता। हमें वह दर्शन गरीब के प्रतिदिन की रोटी में होगा। भूखे आदमी को भगवान के दर्शन रोटी के रूप होंगे, यह प्रतीति हमें होनी चाहिए और वह तभी संभव है जब कि हमारी दृष्टि में प्रेम का आविर्भाव होगा। तो यह प्रेम सिर्फ भावात्मक, बौद्धिक, आध्यात्मिक प्रेम नहीं, मानव के प्रति प्रत्यक्ष, भौतिक प्रेम हो। सत्य को मानवता के रूप में देखना ही अहिंसा है। सत्य से एकरूप होने की साधना प्रेम के बिना संभव नहीं। और प्रेम, भौतिक प्रेम के माने क्या हैं? भौतिक प्रेम के माने हैं प्रत्यक्ष सेवा। प्रेम एक शक्ति है। वह कभी सुप्त नहीं रहती। उसका आविर्भाव जिसमें होता है, वह मनुष्य सक्रिय बनता है। वह प्रेमी-जन की प्रत्यक्ष सेवा में लग जाता है, उनकी मदद के लिए दौड़े जाता है। इसके बिना उससे रहा ही नहीं जाता। प्रेम क्रियात्मक शक्ति है। समग्र विश्व के सत्य को देखना हो तो समग्र विश्व से प्रेम करना चाहिए। और समग्र विश्व से प्रेम याने समग्र विश्व की सेवा करनी होगी। गांधीजी को जो सत्य मिला, वह इसी नये रूप में। सत्य का यह नया अवतार है। इस सत्य-शोधन से पुरानी साधना का परावलंबन समाप्त हुआ।

सज्जनता में अस्पृश्यता

सत्य का स्वरूप कैसा है? 'स्वे महिम्नि प्रतिष्ठितः'—परमात्मा अपनी महान शक्ति पर अधिष्ठित है, ऐसा कहा गया है। सत्य स्वयंभू है, अपनी शक्ति पर खड़ा है। दुनिया में पाप बढ़ा, धर्म का लोप हुआ, अब क्या किया जाय? हे परमेश्वर, तुम अवतार लो और इस दुनिया का उद्धार करो—इस तरह परमेश्वर के अवतार की प्रतीक्षा करने की हमारे मन को आदत हो गयी है। इस नये सत्य को अपनानेवाला समाज स्वयं काम करने लगता है, पुरुषार्थ करने लगता है। युद्ध में पहली हत्या सत्य की होती है, इसलिए युद्ध का त्याग किया जाय, ऐसा कहनेवाले सर्वोदयी लोग बहुत अच्छे हैं, लेकिन निष्क्रिय हैं, ऐसा अन्य लोग मानते हैं। परमेश्वर द्वारा दुर्जनों का संहार हुए बिना दुनिया का सुधार नहीं होगा, ऐसा वे मानते हैं। सज्जनता स्वयं दुर्जनता को नष्ट नहीं करेगी, क्योंकि दुर्जनता से सज्जनता का संपर्क होते ही वह अपवित्र होती है, ऐसी अस्पृश्यता लोगों ने सज्जनता में लायी है। यही अस्पृश्यता सब प्रकार की अस्पृश्यता का मूल है। दुर्जन का काँटा निकालने के लिए ज्यादा दुर्जन बनना पड़ेगा, सेर के लिए सवा सेर बनना पड़ेगा। ऐसा हमने माना है। लेकिन इसमें सेर का चौथाई हिस्सा भी क्यों न हो, कम होने की अपेक्षा, एक सेर और सवा सेर मिलकर सवा दो सेर, पाँच सेर, पाँच सौ सेर, इस तरह बढ़ती श्रेणी में दुर्जनता बढ़ती रही और परिणाम स्वरूप आज मानव-समाज सर्वनाश के कगार पर खड़ा है। गांधीजी ने सज्जनता को इस अस्पृश्यता के कलंक से मुक्त किया और सत्य को स्वतंत्र किया, यह गांधीजी का महान जीवन-कार्य है। गांधीजी के जीवन का यही बोध है, सबक है।

—मूल मराठी 'साधना' साप्ताहिक के
दिनांक ८-२-'६९ के अंक से,
अनुवादक : वसन्तभाई पोद्दार

परिप्रश्न

अन्याय और अवगुणों से मुक्ति का मार्ग

—प्रश्न कार्यकर्ता के : उत्तर धीरेन्द्र भाई के—

प्रश्न : आपने लिखा है कि हर मनुष्य के विचार, दृष्टिकोण, कार्यपद्धति, यहाँ तक कि बेवकूफी के प्रति भी आदर-भाव रख सको तो तुम्हारे सम्बन्धों में और जीवन में सदा आनन्द कायम रहेगा। आपकी यह बात पूरी तरह गले उतरती है। जीवन में इसकी अनुभूति भी कई मौकों पर हुई है। परन्तु एक बात समझ में नहीं आती, उसका जिक्र आपने भी नहीं किया है। मनुष्य की बदमाशी और शैतानियत के प्रति कौनसा भाव रखना चाहिए?

उत्तर : तुमने पूछा है कि मनुष्य की बदमाशी और शैतानियत के प्रति कौनसा भाव रखना चाहिए? जैसे शून्य में कोई शक्ति नहीं होती है, और किसी अंक की पीठ पर बैठकर वह शक्तिशाली होता है, उसी तरह बदमाशी और शैतानियत में अपने आपकी कोई शक्ति नहीं होती है। किसी मनुष्य के दिमाग में घुसकर ही वह शक्तिशाली होती है। शैतानियत शैतान के दिमाग से कैसे निकाली जाय, उसका कोई सामान्य फार्मूला नहीं होता है। हर मामले की तरफ अलग-अलग उसके संदर्भ में देखना होता है। बदमाश और शैतान के प्रति उदारता और करुणा की ही भावना रखनी चाहिए।

प्रश्न : इस युग में कुछ भी आंशिक नहीं होगा, यह विचार अच्छी तरह से हृदयंगम किया है। उसीके अनुसार कार्य करूँगा, ऐसी निष्ठा बन रही है। पूरा समाज किस ओर से कैसे संघर्ष में शामिल होगा यह देखने की बात है। कार्यक्रम इस प्रकार का उठाना होगा, जिसमें पूरे समाज के शामिल होने की बात हो। परन्तु शुरू तो कुछ ही व्यक्तियों को करना पड़ेगा। अन्याय और भ्रष्टाचार के दो रूप हैं : एक तो हम स्वेच्छा से उसमें शामिल हैं, दूसरा यह कि वह हमारे ऊपर लादा जा रहा है। इस स्थिति में सत्याग्रह और असहयोग की दुहरी शक्ति से काम करना होगा। आपका 'दुहरा-मोर्चा' मेरे विचार से इसमें फिट बैठता है। केन्द्र बनाकर बेस के रूप में साधना असहयोग का स्वरूप है, और व्यापक आन्दोलन सत्याग्रह का स्वरूप है। यह व्यवस्था ठीक है क्या?

उत्तर : पूरा समाज अवगुणों से कैसे संघर्ष करेगा उसीकी खोज तो विनोबा कर

रहे हैं। इसकी मुख्य प्रक्रियां यह होगी कि समाज के हर वर्ग और हर प्रकार के लोगों को किसी-न-किसी सत्कार्य में शामिल कर दिया जाय। जैसे सत्संग से मनुष्य की असत् वृत्ति का निराकरण हो सकता है, उसी तरह सत्-कर्म से भी असत् वृत्ति का निराकरण होता है, बल्कि सत्संग से सत्कर्म मनुष्य के चरित्र-निर्माण में अधिक प्रभावशाली होता है। यह सही है कि जिस तरह सत्संग में रहने पर भी असत् व्यक्ति शुरू-शुरू में पूर्वसंस्कार के अनुसार असत् व्यवहार भी करता है, लेकिन एक लम्बी अवधि में सत्संग का प्रभाव उसकी असद् वृत्ति को क्षीण कर देता है, उसी तरह सत्कर्म में लगा असत् व्यक्ति शुरू-शुरू में उस सत्कर्म में भी असत् वृत्ति का प्रवेश करा सकता है, लेकिन सत्कर्म का प्रभाव अन्ततो-गत्वा असत् वृत्ति को क्षीण कर देगा।

अहिंसा की प्रक्रिया में पूरे समाज या किसी वर्ग की ओर से कुछ व्यक्तियों के सिपाही बनकर लड़ाई करने की कल्पना नहीं हो सकती है। शिक्षक बनकर कुछ व्यक्ति समाज को अन्याय के प्रति जाग्रत बना सकते हैं, ताकि लोग अन्याय के निराकरण में लग सकें, लेकिन लड़ाई लड़ने का काम शुरू करना अहिंसा की प्रक्रिया में सही नहीं होगा। तुम लोगों को यह बात बहुत समाधान नहीं देती है, उसका कारण है असहयोग और सत्याग्रह का पुराना संस्कार। कुछ लोगों या वर्गों द्वारा अन्याय के विरोध में सत्याग्रह कराना व्यवहार में भी नहीं उतर सकता है, यह समझ लेना चाहिए। व्यवहार में जो लोग कुछ लोगों के नेतृत्व में अन्याय का प्रतिकार करने चलते हैं, उनमें अन्याय-निराकरण के विचार के प्रति निष्ठा नहीं होती है, बल्कि अपने प्रति होने-वाले अन्याय तथा उसके कष्ट से मन में क्षोभ अधिक होता है। जिनमें (अन्याय-निराकरण के विचार के प्रति निष्ठा रहती है, वे अन्याय-पीड़ित के विक्षोभ को उभाड़कर संघर्ष नहीं कराते हैं।) फलस्वरूप वे पीड़ित जन अन्याय-मुक्ति के लिए संघर्ष नहीं करते हैं, बल्कि अपनी कष्ट-मुक्ति के लिए प्रयास करते हैं। नतीजा यह होता है कि वे अपने प्रति हो रहे अन्याय को समाप्त करने में सफल तो हो जाते हैं, परन्तु अपने अन्दर की अन्याय-वृत्ति

धीरेन्द्र भाई : जीवन शोधक

को कायम रखते हैं और संघर्ष की सफलता से अर्जित शक्ति से जब स्वयं उनको अन्याय करके उससे लाभ उठाने का अवसर प्राप्त होता हैं, तो उसे वे छोड़ना नहीं चाहते। इसलिए 'कुछ लोग' जो अन्याय का प्रतिकार करना चाहते हैं, उन्हें पूरे समाज को अन्याय के खिलाफ सचेत होने की प्रेरणा देनी चाहिए। इससे अन्याय-मुक्ति की दुहरी प्रक्रिया चल सकती है। व्यक्ति की चेतना उसके 'खुद' के द्वारा हो रहे अन्याय से भी मुक्ति के लिए प्रेरित करेगी और उनकी इस क्रिया की सामाजिक प्रतिक्रिया भी इसी दिशा में होगी। अन्याय का प्रतिकार चाहने-वालों को समाज में इस प्रतिक्रिया का द्रुत-गति से प्रसार करना चाहिए।

अन्याय और भ्रष्टाचार के जिस पहलू में हम स्वेच्छा से शामिल होते हैं, उसे तो हमें छोड़ना ही चाहिए, इसके लिए हमें चाहे जितनी भी तकलीफ उठानी पड़े। अन्याय और भ्रष्टाचार का जो पहलू जबर्दस्ती हमारे ऊपर लादा जाता है, उसके लिए उस रचना को ही बदलना होगा, जिसके कारण यह लादनेवाली परिस्थिति बनती है। मेरा 'दोहरा मोर्चा' तुम्हारी असहयोग और सत्या-ग्रह की जो कल्पना है, उसमें शायद फिट नहीं बैठता है। मेरा 'दोहरा मोर्चा' शिक्षण-प्रक्रिया के लिए ही है। क्योंकि मैं मानता हूँ कि इस अणुयुग में तथा स्वाभिमान और स्वातंत्र्य वृत्ति की सार्वजनिक-चेतना के युग में शिक्षण ही सामाजिक शक्ति बन सकता है। आज के युग में दो साल के बच्चे को भी दबाव से नहीं मनाया जा सकता है।

प्रश्न : आज की गरीबी, असमानता और अज्ञान से भी मानव ज्यादा त्रस्त भ्रष्टाचार और अन्याय से है। किसीकी हिम्मत इससे लड़ने की नहीं है। परन्तु मनुष्य अन्दर-ही-अन्दर उसमें शामिल रहते हुए भी लड़ने की आवश्यकता महसूस करता है। यह ग्याँव का ठौर बन गया है! प्रश्न है, कौन पकड़े?

उत्तर : आज समाज में उत्कट 'पैरा-डाक्स' पैदा हो गया है। हरएक व्यक्ति अन्याय और भ्रष्टाचार का शिकार है, और हरएक व्यक्ति अन्याय और भ्रष्टाचार करता है। इसी 'पैराडाक्स' के कारण आज किसीकी लड़ने की हिम्मत नहीं पड़ती है। हरएक व्यक्ति जो लड़ने की आवश्यकता महसूस करता है वह अपने ऊपर के अन्याय से लड़ना चाहता है, लेकिन अपने अन्दर का अन्याय उसे लड़ने नहीं देता है। इसीलिए विनोबा आज सम्पूर्ण समाज को मुक्ति के कार्यक्रम में शामिल करना चाहते हैं, क्योंकि बन्धन भी सम्पूर्ण का ही है।•

मौलिक चिंतक, प्रखर क्रान्तिकारी और जीवन-शोधक धीरेन्द्र भाई की जीवन-यात्रा के अनुभवों का सार-संचयन यानी अहिंसक क्रान्ति की शक्ति और पद्धति के विकास की प्रक्रियाओं का जीता जागता इतिहास।

तीन खण्डों में

पूरे सेट की कीमत : मात्र ६ रुपये

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी-१

पठनीय मननीय

नयी तालीम

शैक्षिक क्रांति की अग्रदूत मासिकी

वार्षिक मूल्य : ६ रु०

सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी-१

संस्था, सेवक और सेव्य

www.vinoba.in

—चिंतन के लिए कुछ मुद्दे—

गत एक माह से मेरे मन में एक विचार चल रहा है। मेरे एक मित्र डेढ़-दो माह के लिए सीलोन चले गये थे। वहाँ सर्वोदय-मण्डल है। उसके २५०० सदस्य हैं। हर सदस्य माहवार २ रु० फीस देता है। कोई कार्यकर्ता पूरे समय का नहीं है। सभी सदस्य छुट्टी के दिन अपना समय सेवा-कार्य में लगाते हैं। कोई वेतन नहीं लेता है। सब एक विचार से सप्ताह में एक या दो दिन गाँव में जाकर रहते हैं या कोई सेवा-कार्य करते हैं। इस तरह का संगठन बना है। सर्वोदय-विचार का प्रचार भी होता है। साहित्य-प्रचार भी वे लोग करते हैं, अखबार भी निकाला जाता है। अतः मेरे मन में विचार आता है कि क्या इस तरह का संगठन हमारे यहाँ भी बन सकेगा? या फिर हमारे जैसे वेतन-भोगी कार्यकर्ता ही यह आन्दोलन चलाते रहेंगे?

विनोबाजी ने सन् १९४६ में कहा था कि कुछ कार्यकर्ता वानप्रस्थी और कुछ गृहस्थ होने चाहिए। १० गृहस्थों के पीछे १ वानप्रस्थी हो सकता है। वह नहीं बन सका। आज हम सब वेतनभोगी हैं। यही कारण है कि हमारा आन्दोलन कार्यकर्ताओं तक ही सीमित रह गया है। भूदान-आन्दोलन तभी व्यापक बनेगा और उसे गति मिलेगी, जब सीलोन की तरह का संगठन हम बना सकेंगे।

सन् १९२५ में मेरी गांधीजी से इस बारे में चर्चा हुई थी। मैंने उनसे कहा था कि पहले खादी नहीं बल्कि खेती हो। वे बोले, "नहीं, जबतक आजादी की लड़ाई करनी है तबतक सैनिक ऐसे हों, जो कभी भी घर छोड़कर निकल सकें, पीठ पर अपना संसार लेकर चल सकें। जैसे बिच्छू अपना संसार अपनी पीठ पर रखता है, उसी तरह आन्दोलन के लिए ऐसी ही सेना होनी चाहिए। इसलिए खेती में आज कार्यकर्ता नहीं ले जाना चाहता हूँ। अतः खादी-काम करो। वास्तविक चीज है जनता से सम्पर्क। उसीका महत्त्व है। सभी विधायक कार्यक्रम जनता के पास पहुँचने के साधन हैं।"

गांधीजी को भी यह आशा नहीं थी कि भारत की सभी मिलें बन्द हो जायेंगी, और घर-घर खादी बनेगी। लेकिन खादी हो, ग्रामोद्योग हों, हरिजन-सेवा हो, इन सबका उद्देश्य जनता से परिचय करना, मेल करना ही था।

आज यहाँ (कोरापुट—उड़ीसा में) ग्रामदान संघ, सहकारी संघ आदि बने हैं। ये सभी संगठन कार्यकर्ताओं को जनता के बीच पहुँचने में मदद करते हों तो ठीक है, अन्यथा दीवाल बनाने से क्रान्ति नहीं होगी। जनता से सम्पर्क बढ़ाया जाय तो ही क्रान्ति हो सकती है। अगर हमारे संगठन इसमें मदद-रूप हों तो उनको रखें, अन्यथा नहीं।

संगठन का भी एक नियम है। विनोबाजी बारडोली के स्वराज्य-आश्रम में गये। संस्थाओं के बारे में उन्होंने कहा, "ये सब आश्रम परोपजीवी बन गये हैं। ये ज्यादा दिन टिकनेवाले नहीं हैं। जबतक गांधी का नाम चलता है, ये टिकेंगे, बाद में नहीं, क्योंकि जनता से इनका सम्बन्ध नहीं रहा है।"

संस्था किसी उद्देश्य से बनती है, बड़ी होती है। कार्यकर्ता भी बढ़ते हैं। लेकिन कुछ समय बाद कार्यकर्ताओं के सवाल हल करना ही काम रह जाता है। आम जनता से सम्पर्क छूट जाता है। आज हमारे संगठन की यह परिस्थिति है। अतः नये संगठन से और बंधन बढ़े, ऐसा न करें।

सन् १९२० से २५ साल तक हम लोग स्वराज्य का आन्दोलन करते रहे। सब संस्थाएँ सन् १९३० के आसपास बनीं। तबतक ग्राम-आधारित ही हमारा जीवन चलता था। उस समय जितना परिचय गाँवों का हुआ, वह बाद में नहीं हुआ। क्योंकि बाद में संस्थाएँ आ गयीं, कार्यकर्ता बन गये और उनसे ही सम्पर्क रहा। बुनकरों, कत्तिनों आदि से सम्पर्क कम हो गया। किसी भी संस्था की यह मर्यादा हमेशा रहती है।

अरुणा सहस्रबुद्धे

अरुणा : जीवन-शिल्पी

अतः संस्था बनाने के साथ जनता की तरफ से ध्यान ओझल होता है, जिससे क्रान्ति का वातावरण नहीं बनता है।

बुद्ध भगवान ने कहा है: "बुद्धं शरणं गच्छामि, संघं शरणं गच्छामि, धम्मं शरणं गच्छामि"! संस्थाओं की प्रगति भी इसी दिशा में होनी चाहिए। एक क्रान्तदर्शी व्यक्ति संस्था बनाता है। उसके व्यक्तित्व से लोग एकत्रित होते हैं। व्यक्ति-आधारित संस्था बनती है। लेकिन हमें 'संघं शरणं गच्छामि' की नीति पर जाना चाहिए। एक व्यक्ति-आधारित संस्थाएँ आगे नहीं चल पायेंगी। और आगे चलकर संघ-शक्ति छोड़कर धर्म यानी सिद्धान्त पर डटे रहने का कर्तव्य भी आ सकता है।

एक ही ध्येयवाद से प्रेरित लोग साथ मिलकर एक दिल से काम नहीं करें तो संघ-शक्ति नहीं बनेगी, और न आन्दोलन ही बढ़ेगा। ईसाइयों का एक संगठन है। वे लोग रोज मिलते हैं। सर्वसम्मति होने पर ही आगे बढ़ते हैं। इसीलिए आज भी उनमें संघ-शक्ति है। लेकिन हमारे मुँह अलग-अलग दिशा में हैं। हमलोग अलग होने की दिशा में अपनी शक्ति खर्च करते हैं।

स्वराज्य के समय आन्दोलन के कार्यकर्ता थे, लेकिन स्वराज्य के बाद परिस्थिति बदल गयी है। अब आन्दोलनात्मक या भावनात्मक काम करने के साथ यदि आप किसी एक विद्या में तज्ञ नहीं होंगे तो

इसके आगे देश में काम नहीं कर सकेंगे। आम जनता यदि खेती जानती है तो हमें अन्य काम करते हुए भी खेती और उसका विकास का काम करना चाहिए। उसका तज्ञ बनना चाहिए, तभी जन-सम्पर्क बनेगा। दूसरी बात कि हम जो करते हैं, उसका उनको भी भान हो, जिनके लिए वह किया जाता है।

जो लोग ४० से कम उम्र के हैं, उन सबको श्रम का अभ्यास करना चाहिए। श्रमाधारित जीवन बिताना चाहिए। जिस क्षेत्र में काम करना है उस जनता के मुख्य उद्योग में हमें निष्णात बनना चाहिए। उनकी भाषा सीखनी चाहिए। भाषा के बिना एकरूपता नहीं आयेगी। इस तरह उनका उद्योग, भाषा और उनके रीति-रिवाज का ध्यान रखने के साथ हमारा अध्ययन जारी रहे, तभी जन-सम्पर्क सधता है। ग्रामदान-भूदान के सैनिक के नाते काम करना हो तो भी यह सारा जरूरी हो गया है। उद्योग ऐसा हो, जिससे आप अपनी जीविका चला सकें, यह होगा तभी जनता का सहकार मिलेगा।

आज समाज में जो अन्याय चल रहे हैं, वे तबतक चलते रहेंगे, जबतक कि जनता जागृत नहीं हो जायगी। इसलिए जनता को जागृत करना ही मुख्य काम है। •

भूदान तहरीक

उर्दू भाषा में अहिंसक क्रांति की संदेशवाहक पाक्षिक पत्रिका

वार्षिक शुल्क : ४ रुपये

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी–१

सम्पादक के नाम पत्र

"भूदान-यज्ञ : नाम-चर्चा

महोदय,

१३ जनवरी '६९ के प्रकाशित सम्पादक के नाम पत्र को पढ़ा और भाई जंगबहादुर के तर्कयुक्त विचार का स्वागत करता हूँ। मैं भी मानता हूँ कि 'भूदान-यज्ञ' जनमानस व लोकमानस के माफिक नहीं है। मेरे विचार से सर्वोदय-लक्ष्य और भूदान एवं ग्रामदान साधन एवं साध्य ठीक है। लेकिन सर्वोदय-विचार स्वयंपूर्ण है, अतः क्यों नहीं इसका नाम 'सर्वोदय-विचार' रखा जाय ?

—सुदर्शन सिंह

जोगीबांध, सरगुजा
२८–१–'६९

हिंसात्मक खूनी क्रान्ति एवं गांधीजी

गांधीजी ने कहा था :

"आर्थिक समानता के लिए काम करने का मतलब है पूंजी और श्रम के बीच के शाश्वत संघर्ष का अन्त करना। इसका मतलब जहाँ एक ओर यह है कि जिन थोड़े-से अमीरों के हाथ में राष्ट्र की सम्पदा का कहीं बड़ा अंश केन्द्रीभूत है उनके उतने ऊँचे स्तर को घटाकर नीचे लाया जाय, वहाँ दूसरी ओर यह है कि अध-भूखे और नंगे रहनेवाले करोड़ों का स्तर ऊँचा किया जाय। अमीरों और करोड़ों भूखे लोगों के बीच की यह चौड़ी खाईं जब तक कायम रखी जाती है तब तक तो इसमें कोई सन्देह ही नहीं कि अहिंसात्मक पद्धतिवाला शासन कायम हो ही नहीं सकता। स्वतंत्र भारत में, जहाँ कि गरीबों के हाथ में उतनी ही शक्ति होगी जितनी कि देश के बड़े-बड़े अमीरों के हाथ में, वैसी विषमता तो एक दिन के लिए भी कायम नहीं रह सकती, जैसी कि नयी दिल्ली के महलों, और यहीं नजदीक की उन सड़ी-गली झोंपड़ियों के बीच पायी जाती है, जिनमें मजदूर-वर्ग के गरीब लोग रहते हैं। हिंसात्मक और खूनी क्रान्ति एक दिन होकर ही रहेगी, अगर अमीर लोग अपनी सम्पत्ति और शक्ति का स्वेच्छापूर्वक ही त्याग नहीं करते और सबकी भलाई के लिए उसमें हिस्सा नहीं बंटाते।"

देश में दंगे-फसाद और खून-खराबी का वातावरण बढ़ता जा रहा है। इसमें आर्थिक, सामाजिक विषमता भी बड़ा कारण है। गांधीजी की उक्त वाणी और चेतावनी आज अधिक ध्यान देने को बाध्य करती है। क्या देश के लोग, विशेषतः अमीर, समय के संकेत को पहचानेंगे ?

गांधी रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति (राष्ट्रीय गांधी-जन्म-शताब्दी समिति), डुंगलिया भवन, फुन्दीगरों का भैरू, जयपुर–३ राजस्थान द्वारा प्रसारित।

www.vinoba.in

जर्मनी के प्रसिद्ध क्रान्तिकारी

डा० हान्स : यातनाओं से निखरा एक व्यक्तित्व

बात २६ जनवरी '६१ की है। कुण्डेश्वर (जिला टीकमगढ़, म० प्र०) में केन्द्रीय गांधी-जन्म शताब्दी समिति, नयी दिल्ली की जन-संपर्क समिति की ओर से एक शिविर 'बा-बापू' सप्ताह के उपलक्ष में आयोजित किया गया था। और उसमें मार्ग-दर्शन हेतु जर्मनी के प्रसिद्ध क्रांतिकारी डा० हान्स ए० डी० बोअर भी पधारे थे। शिविर में डा० हान्स के व्यक्तित्व और अभिव्यक्ति ने मुझे अत्यधिक आकर्षित किया।

डा० हान्स ने बताया कि "हिटलर के समय में जर्मनी में जो हिंसा हुई उसे सुनकर दिल कांप उठेगा! ऐसा नर-संहार हुआ कि ठेले लाशों पर से गुजरते थे और एक मिनट में १५-१५ बच्चों को मौत के घाट उतारा जाता था! सरकार फौज में भरती होने के लिए बाध्य करती थी। मुझे भी किया गया था और मेरी अस्वीकृति के कारण मुझे अनेक यातनाएँ सहनी पड़ी थीं। मुझे जेल में बंद करके खाना नहीं दिया गया। तीन दिन के बाद खाने के लिए सड़े चूहों का मांस और पीने के लिए पानी के स्थान पर पेशाब दी गयी। देह कांप उठी! जेल में मेरा एक फेफड़ा और किडनी बेकार हो गयी। अंत में मैं कायर बन गया और फौज में भरती होने की स्वीकृति दे दी। लेकिन मैंने वर्दी अपने हाथ नहीं पहनी, बंदूक नहीं ली, इस पर मुझे फिर जेल भेज दिया गया। वहाँ मुझे दो तवों पर खड़ा करके नीचे से बिजली के झटके दिये गये। मैंने फिर कायर बनकर उनकी शर्तें स्वीकार कर लीं।"

"जर्मनी में मुझे 'क्रिश्चियन गांधी' कहा गया। 'क्रिश्चियन' शब्द का ज्ञान तो मुझे था, किन्तु 'गांधी' मेरी समझ से बाहर का शब्द था। मैंने इसे जानना चाहा। लोगों ने बताया कि भारत में एक ऐसा व्यक्ति है, जो आधा नंगा रहता है और संसार में अहिंसा के द्वारा शांति स्थापित करना चाहता है। सत्य, प्रेम, न्याय, तीनों के द्वारा विश्वबंधुत्व की भावना को साकार करना चाहता है।" डा० हान्स ने अपनी बात जारी रखते हुए कहा कि "हिंसा का रूप मैं देख चुका था। इसलिए मुझे अहिंसा और शांति की बात जल्दी समझ में आयी, और एक दिन मैं फौज से भाग गया विदेश जाने के लिए। रास्ते में मैंने अपने नाम का 'पासपोर्ट' एक अन्य व्यक्ति को दे दिया और उसका मैंने ले लिया, क्योंकि फौज मेरा पीछा कर रही थी। थोड़े दिनों के बाद मैंने कुछ लोगों को एक जनाजा दफनाने के लिए ले जाते देखा और मैं भी उसमें शामिल हो गया। जब उस मृत व्यक्ति के बारे में जानने की इच्छा हुई, तो मैंने लोगों से पूछा। लेकिन कोई उसका नाम नहीं बताता था। जब मैंने एक व्यक्ति से बहुत ही आग्रह करके पूछा तो उसने कहा, 'शोर मत करो, डा० हान्स को मार डाला गया! यह उन्हींका जनाजा है।' मुझे स्थिति को समझते देर न लगी कि मैंने अपने नाम का 'पासपोर्ट' जिस व्यक्ति को दिया था, उसको डा० हान्स मानकर मार डाला गया। मुझे बड़ी पीड़ा हुई।"

"...और तब मैंने 'भारत छोड़ो' की भाँति 'हिटलर छोड़ो' का नारा बुलंद किया तथा हिटलर के विरुद्ध भीषण बगावत की। रेलें गिराकर बारूद एवं रसद रोकी। फल-स्वरूप मेरे मकान पर बम गिराया गया, जिससे मेरे पिता का देहान्त हो गया। मैं और मेरी बहन मलवे से निकाले गये। मेरी माँ की हत्या कर दी गयी और काटकर उसके शरीर के सोलह टुकड़े कर दिये गये। मैं फिर पकड़कर बंदी बना लिया गया और मुझे और मेरे १८ साथियों को फाँसी की सजा सुनायी गयी। वे १८ व्यक्ति तो हँसते-हँसते फाँसी पर झूल गये, लेकिन हिटलर की अधीनता नहीं स्वीकारी।...लेकिन..."

डा० हान्स ने वेदनायुक्त आवाज में कहा, "केवल मैं कायर क्षमा-याचना करने पर फाँसी की सजा से मुक्त कर लिया गया। लेकिन फिर मैंने बगावत करना शुरू कर दिया, जिससे मुझे अनेक यातनाएँ भोगनी पड़ीं। मेरे सभी नाखूनों को निकालकर सूइयाँ चुभोयी गयीं। मैंने फिर जर्मनी से निकलने का निश्चय कर लिया। और अपने देश को छोड़कर संसार के सभी देशों में अबतक घूमा। सभी देशों की नीतियाँ मेरी समझ में आयीं, लेकिन योरप बार-बार युद्ध क्यों पसंद करता है, यह अभी तक समझ नहीं पाया।"

डा० हान्स ने भारत के सम्बन्ध में अपनी राय जाहिर करते हुए कहा, "यद्यपि भारत को मैं कोई उत्तम देश नहीं मानता, लेकिन यही एक ऐसा देश है जो पश्चिमी सभ्यता से अछूता है, और यहीं से नयी रोशनी पाने की अन्य देश आशा लगाये हैं।" भारत-प्रवास के अपने अनुभवों को सुनाते हुए डा० हान्स ने बहुत ही व्यथित होकर कहा, "जब मैं भारत आया तो विजयवाड़ा में मुझे पता चला कि १५ हरिजनों की हत्या कर दी गयी। यद्यपि १५ व्यक्तियों की हत्या मेरे लिए कोई नयी खबर नहीं थी, किन्तु इसके साथ नयी और आश्चर्यजनक खबर यह थी कि उसीके बगल में लोग सूत कातते रहे, मंदिरों में 'ओम् शांति' 'ओम् शांति' चिल्लाते रहे, नमाज पढ़ते रहे, गिरजाघरों में ईसा के उपदेशों को चुपचाप सुनते रहे, पर किसीने इस दुष्कृत्य को रोकने की कोशिश नहीं की। गांधी का यह देश मुझे अपने यहाँ खींच लाया, किन्तु आते ही यह अत्याचार देखकर मुझे लगा कि इस देश के लोग जितनी बात करते हैं, उतना काम नहीं करते। गांधी की अहिंसा अन्याय बर्दाश्त करना नहीं सिखाती, अन्याय के विरुद्ध जेहाद बोलना सिखाती है। हम अपनी आँखों के सामने अन्याय देखते हैं, अथवा उसका अनुमोदन करते हैं तो नि संदेह हम मूक हिंसा करते हैं।"

डा० हान्स इन दिनों सेवाग्राम-आश्रम में "अन्तर्राष्ट्रीय विचारधारा एवं गांधी-विचार-धारा" पर शिक्षण-कार्य कर रहे हैं। आप वहाँ से केवल १५० रु० प्रतिमाह लेते हैं, जिसमें से ९० रु० प्रतिमाह केवल डाक-व्यय में ही खर्च हो जाते हैं, शेष ६० रु० में खाना कपड़ा एवं अन्य व्यय शामिल हैं।

—हरिगोविन्द त्रिपाठी 'पुष्प'

आत्म-समर्पणकारी बागियों के जीवन का नया अध्याय

विनोबाजी के समक्ष आत्म-समर्पण करनेवाले उन २० बागियों का क्या हुआ ? यह प्रश्न सहज ही लोग पूछते हैं। यह घटना मानव-इतिहास का नया परिच्छेद है। यद्यपि विनोबाजी के समक्ष आत्म-समर्पण करने से पहले भी अंगुलीमाल से लेकर आज तक कई डाकुओं के आत्म-समर्पण की कहानियाँ इतिहास-प्रसिद्ध हैं, पर सामूहिक रूप से आत्म-समर्पण की यह पहली ही घटना है।

इन २० डाकुओं के पूरे गैंग के गैंग ने जब समर्पण किया तो यह समाचार अखबारों के लिए एक सनसनीखेज खबर थी। इस घटना को हुए अब लगभग ६ वर्ष हो गये। इस अवधि में उनका क्या हुआ ? आज वे कहाँ और कैसे हैं ?

२० बागियों में से १६ अपराध-मुक्त हो चुके हैं, और सामान्य गृहस्थ का जीवन बिता रहे हैं। एक डरेलाल ही आजन्म कारावास की सजा जेल में भुगत रहे हैं। बीसों व्यक्तियों पर सन् १६६० से लेकर सन् १६६४ तक ६२ मुकदमे मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश तथा राजस्थान राज्यों के भिण्ड, मुरैना, दतिया, ग्वालियर, आगरा, इटावा व हिण्डोल में कत्ल, अपहरण व डकैती के चले। इनमें से कुछ की अपीलें इलाहाबाद, जबलपुर और जोधपुर के हाईकोर्ट में की गयीं। कुछ के हाईकोर्ट में फैसलों के बाद सुप्रीम कोर्ट में भी अपीलें की गयीं। चम्बल घाटी शान्ति-समिति के प्रयत्न से उपरोक्त सभी अदालतों में बड़े-बड़े वकील और एडवोकेट्स ने निःशुल्क पैरवी की। नीचे की अदालतों से दोषमुक्त सिद्ध होने पर सरकार ने भी हाईकोर्ट तक अपीलें कीं। दोनों तरफ से यह न्याय की कहानी लगातार ४ साल तक कही-सुनी गयी। सबसे पहले मुकदमे में तो केवल १ को छोड़कर १६ ने सहर्ष अपना अपराध स्वीकार कर लिया था। पर बाद में जेल में इन लोगों पर पुलिस की ओर से ज्यादतियाँ होने लगीं और आई० जी० पुलिस की दृष्टि में गुनहगार का गुनाह छुड़ाना ही गुनाह हो गया ! उन्होंने इन्हें तो इन्हें, विनोबा तक को अपने 'प्रेस-स्टेटमेंट' में फटकार डाला !

इसी बीच मानव-इतिहास की इस उज्ज्वल घटना के सूत्रधार मेजर जनरल यदुनाथ सिंह का हार्टफेल हो गया। शासन का रवैया ही बदल गया। तरह-तरह के अत्याचार हुए, जिसे देखकर इन आत्म-समर्पणकारियों ने भी कहना शुरू किया कि सरकार जो अपराध बताती है, उसे वह सिद्ध करे। हम क्यों उसे अपनी ओर से स्वीकार करें ? इन ६२ मुकदमों में कुछ ऐसे भी थे, जिनमें ये लोग कतई शामिल नहीं थे। केवल पुलिस के शक का आधार था। इसलिए उन्होंने फिर अस्वीकार करना शुरू कर दिया। सबसे पहले आत्म-समर्पण करनेवाले रामग्रौतार को फाँसी की सजा हुई, जिसकी अपील इलाहाबाद हाई-कोर्ट में होने पर वह बिलकुल बरी हो गया। कुछ लोगों को ५–७ और १०–१० साल की सजाएँ हुईं। लोकमन, तेजसिंह और भगवान सिंह को आजन्म कारावास हुआ था, जिसे मध्य प्रदेश सरकार और राज्यपाल ने पिछले साल १७ अप्रैल १६६८ को क्षमा दान देकर माफ कर दिया।

आत्म-समर्पण के बाद विनोबाजी की उपस्थिति में एक चम्बल घाटी शान्ति-समिति का गठन हुआ था। उस समिति ने इन लोगों की पैरवी, पुनर्वास और क्षेत्र में शांति-स्थापना के काफी प्रयास किये। बागियों की शत्रुता जिन लोगों से थी, उनके मनोभाव बदलने की कोशिश की। उनका प्रेम प्राप्त किया। जिनको मारकर ये बागी फरार हुए, उनके सम्बन्धियों ने वाणी से ही नहीं, बल्कि हृदय से इन लोगों को क्षमा किया। इसीलिए जेल से छूटकर आने के बाद अब ये लोग अपने गाँव में अपने घर पर रह रहे हैं, अपनी खेती कर रहे हैं। यह काम आत्म-समर्पण से भी अधिक महत्त्व का हुआ है। एक प्रकार से सन्दर्भ और परिस्थिति बदलने का काम हुआ है। परस्पर का प्रेम और मैत्री-भाव बढ़ा है, और लोगों ने महसूस किया है कि बैर से बैर नहीं मिटता।

जेल से छूटकर आने के बाद इन लोगों को भी बराबर यह लगता रहा है कि कोई क्या कहेगा ? उनका कहना है कि हमने आत्म-समर्पण किया था। यह हमारी नयी जिन्दगी है। इन लोगों ने फिर कोई लूट-पाट, अपहरण आदि नहीं किये। इनके रहन-सहन से क्षेत्र के लोगों को भी विश्वास हो चला है कि अब इनसे कोई खतरा नहीं है। इनकी पहचान अब इनकी इन्सानियत से होने लगी है। इनका विचार बदला है, और उसके फलस्वरूप जीवन का व्यवहार भी बदला है।

चम्बल घाटी शांति-समिति ने पैरवी के काम की तरह ही इनके पुनर्वास के लिए काफी प्रयत्न किया है। जेल से छूटकर आने के बाद इनकी पुरानी जमीन पर इन्हें कब्जा दिलाया है, जिसे इनके साथ दुश्मनी रखने-वालों ने जबरदस्ती जोत ली थी। जिनके पास पुराना घर और जमीन नहीं थी, उनको घर बनाने के लिए आर्थिक सहायता और भूदान-यज्ञ में प्राप्त जमीन दिलायी गयी है। कुछ को बैल खरीदने में भी आर्थिक सहायता की है। अब तो इस समिति ने कुछ राहत के काम भी स्थायी तौर पर अपना लिये हैं : जैसे—खादी उत्पादन और बिक्री, अन्न-प्रशोधन, चर्म-उद्योग, बढ़ईगीरी, लुहारी आदि के काम। इससे इस क्षेत्र के बागी और बागी-पीड़ित परिवारों के हजारों लोगों की रोजी-रोटी का सिलसिला शुरू हो गया है। पीड़ित परिवारों के बच्चों का एक निःशुल्क छात्रावास भिण्ड में शुरू हुआ है। विरोधियों का सहयोग प्राप्त करने में इससे आशातीत सफलता प्राप्त हुई है।

इस क्षेत्र में शान्ति-स्थापना की दिशा में लल्लू दद्दा ने सभी का प्रेम प्राप्त करने में अद्भुत सफलता पायी है। उनका प्रशासकीय अधिकारियों एवं पुलिस-कर्मचारियों, सभी से प्रेम का नाता। इन आत्म-समर्पणकारी बागियों की बहुत-सी छोटी-छोटी दिक्कतों को उन्होंने अधिकारियों से मिल-जुलकर समाप्त करा दी। कुछ नये छोटे-छोटे बागियों को हाजिर भी कराया। उनके मन से भय की भावना दूर कर प्रेम से रहने की स्थिति उत्पन्न की।

—गुरुशरण

www.vinoba.in

विनोबा-निवास से

[ता० १ से १५ मार्च, १९६९]

[कार्यकर्ता साथियों तथा 'भूदान-यज्ञ' के पाठकों की जोरदार माँग के अनुसार अब हम 'विनोबा-निवास से' इस स्तम्भ को चालू कर रहे हैं। यह स्वाभाविक है कि आन्दोलन के केन्द्रीय व्यक्तित्व के इर्द-गिर्द की हलचलों से आन्दोलन में लगे हुए लोगों और आन्दोलन में रुचि रखनेवालों को प्रेरणा, स्फूर्ति और अद्यतन जानकारी प्राप्त हो सकेगी। इस स्तम्भ को चालू करने के लिए श्री कृष्णराज भाई ने यह अतिरिक्त कष्ट स्वीकार किया है, इसके लिए हम आभारी हैं। हम आशावान हैं कि यह सिलसिला भविष्य में कायम रख सकेंगे। —सं०]

१ मार्च :

पंडित विनोदानन्द झा अपने घर (देवघर) जाते हुए बाबा से मिलने पहुँचे। यह पूरा वर्ष ग्रामदान और गांधी-जन्म-शताब्दी-कार्यों में लगाने का अपना निश्चय उन्होंने जाहिर किया। सबसे पहले पटना और शाहाबाद जिलों का जिलादान पूरा करने में वह लगेंगे।

जिला तरुण-शान्ति-सेना द्वारा शहर के एक पुराने और विद्वान मुस्लिम सज्जन के मकान पर आयोजित सभा में विनोबाजी गये। समझाया कि, "प्राचीन धर्म-ग्रन्थों में कुछ हिस्से अब भी काम के हैं, और कुछ छोड़ने लायक हैं, यह बात ध्यान में आनी चाहिए।

हमने गहरे अभ्यास के बाद भिन्न-भिन्न धर्मों के सार-ग्रन्थ तैयार किये हैं, इससे एक-दूसरे के धर्म को और ग्रन्थों को समझना आसान होगा।"

२ मार्च :

कैथोलिक चर्च के बिशप अर्बन मेगारी (Urban Megarrie) ११ बजे मिलने आये। प्रसन्नचित्त और उदार वृत्ति के दीखे। बोले, "विनोबाजी, मैं आपके काम का समाचार हमेशा पढ़ता आया हूँ। आप बहुत महत्त्व के कार्य में लगे हैं।" जब उन्हें सुझाया गया कि उनका सहयोग संथाल परगना में मिलना चाहिए, तो उन्होंने खुशी से अपनी तैयारी बतायी। बाबा ने पूछा, "घर में माँ किस नाम से बुलाती थी?" घर का नाम युजन (Eugene) बताया। बाबा ने कुछ सोचने पर कहा, "युरोप शब्द का मूल उच्चारण सुरूप है, इसलिए आपको युजन की जगह सुजन कहेंगे।" और 'सुजन स्वामी' नाम लिखकर अंग्रेजी की 'खिस्त धर्मसार' पुस्तक बाबा ने उन्हें भेंट की।

यहाँ गंगा-किनारे महर्षि मेंहीदासजी का आश्रम है। ८५ वर्ष के होने पर भी उनके सब अवयव ठीक हैं। ध्यान-प्रक्रिया की दीक्षा शिष्यों को देते हैं।

आजकल वे अपने स्थान से कहीं बाहर गये हैं। परन्तु आश्रम के भक्तों का आग्रह देखकर विनोबाजी आज ४ बजे सायं उनका स्थान देखने गये।

शाम की बैठक में जिला-स्तर के एक शासकीय सेवक सपरिवार आये। पूछा कि, "मैं नौकरी में सच्चाई, ईमानदारी बरतता आया हूँ। परन्तु देखता हूँ कि मेरी जायज पदोन्नति भी नहीं हो पाती।" विनोबाजी ने पहले उनके परिवार और आमदनी वगैरह की जानकारी ली, और सुझाया कि, "अपने से कम स्तरवालों की तरफ देखेंगे, तो मन में खिन्नता नहीं होगी।"

३ मार्च :

पटना से श्री विद्यासागर भाई आये थे। बताया कि कार्यकर्ता होली मनाने चले गये हैं, और मैं अपनी होली बाबा के सहवास में मनाने आ गया हूँ।

राष्ट्रीय त्यौहारों के शुद्धिकरण की जरूरत समझाते हुए बाबा ने डा० रामजी सिंह के साथ हुई चर्चा में कहा, "आनन्द के बिना प्राणी का जीवन क्षण भर भी नहीं रहता। मच्छर को भी खून चूसने का आनन्द होता है। मानव की कोशिश आनन्द-प्राप्ति न होकर आनन्द-शुद्धि की होनी चाहिए। यही उसके विकास की कसौटी है।"

शाम को एक वकील को बता रहे थे कि, "वकील का काम है कानून का भाष्य करना। शंकर, रामानुज ने धर्म-ग्रंथों का भाष्य ही तो किया है। और कुरान में 'वकील' ईश्वर का ही एक नाम बताया है। वहाँ वकील का अर्थ संरक्षक हुआ है।"

५ मार्च :

बिहार ग्रामदान-प्राप्ति समिति के मंत्री श्री वैद्यनाथ बाबू, बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ के मंत्री श्री रमपति बाबू, जिला ग्रामदान समिति के अध्यक्ष श्री जागेश्वर मंडल और श्री रामजी सिंह ने जिलादान के लिए पैदा हुए उत्साह को बनाये रखने हेतु विनोबाजी से निवेदन किया कि ईद और होली के कारण प्राप्ति-कार्य में जो बाधा आ गयी उसकी पूर्ति करने के लिए आप दस दिन तक जिले में और रुकना स्वीकार करें। बाबा १६ मार्च की जगह अब २६ मार्च तक इस जिले में रहेंगे।

शाम को बाबा ने मैत्री-आश्रम (५ मार्च '६२ को असम के पूर्व के छोर पर लखीमपुर जिले में बाबा के द्वारा स्थापित) की स्थापना-दिवस के निमित्त इन ७ वर्षों में आश्रम द्वारा हुए कार्यों का सिंहावलोकन किया। असम की स्त्री-शक्ति का गौरव करते हुए अमलप्रभा बाईदेव का स्मरण स्वाभाविक था।

श्री हनुमानदास हिम्मतसिंघका, जिनका आतिथ्य हमें भागलपुर में आने के दिन से उपलब्ध है, (उनके निवास पर ही हम लोग ठहरे हुए हैं), बाबा के शिक्षण-सम्बन्धी विचारों से प्रेरित होकर जीवन-शिक्षण की योजना करने में आतुर हैं। उन्होंने बाबा से इस नये विद्यालय का नाम पूछा।

बाबा ने 'सा विद्या या विमुक्तये' कहकर 'मुक्ति विद्यालय' नाम दिया।

६ मार्च :

नगर के कुछ व्यापारी बाबा के पास शाम को बैठे। बाबा ने कहा, "राहत के कामों में करुणाप्रेरित होकर भारत में और दुनिया में हमेशा दान दिया जाता रहा है। गरीब दुःखी को कुछ दिया यह काफी नहीं। सोचना यह होगा कि उसकी गरीबी कैसे मिटे। मुझे महाजनों के सहयोग की कीमत है, धन ले लेने से ही अहिंसक क्रांति नहीं होगी, नयी समाज-रचना में उनका हृदय मुझे चाहिए।"

www.vinoba.in

७ मार्च :

श्री हेलम टेनिसन शाम को जैसे पहुँचे, वैसे सीधे बाबा के पास आये। प्रणाम (भारतीय पद्धति से) करके बोले, "बाबा मैं १५ वर्ष पूर्व आपके साथ पदयात्रा में रहा था।" टेनिसन बंगला में बोले। वह सन् '४६ से '४८ तक, आज के 'पूर्व पाकिस्तान' के देहातों में रह चुके हैं।

८ मार्च :

आज सुबह और शाम मुलाकात के दोनों समय श्री टेनिसन को दिये। उन्होंने चर्चा टेप-रिकार्ड करनी चाही। बाबा ने मना किया और कहा कि, "ये चर्चाएँ हृदय-से-हृदय जोड़ने के लिए हैं। चैतन्य-से-चैतन्य को जो प्रेरणा मिलनी होगी, वह मिलेगी। आज तक दुनिया में बड़े आध्यात्मिक विचार इसी माध्यम से फैलते आये हैं।"

टेनिसन क्वेकर पंथ के हैं। बाबा ने कहा, "क्वेक शब्द का अर्थ है कंपन। भक्त भक्ति में भावविभोर होकर कंपन की स्थिति में आ जाता है, उसे संस्कृत में विप्र कहा है। वेपन का अर्थ भी कंपन है। आप क्वेकर हैं और मैं विप्र हूँ।" टेनिसन ने बताया कि ३० जनवरी को इसी वर्ष गांधी-जन्म-शताब्दी के निमित्त लंदन के बड़े गिरजा में हम लोगों ने जो प्रार्थना की, उस समय बापू की प्रिय धुन "रघुपति राघव..." गायी गयी थी। चर्चा के भिन्न-भिन्न विषय थे। ग्रामदान से उत्पादन बढ़े इसमें टेनिसन की विशेष रुचि थी। ब्रह्मचर्य और संतति-संयम समझाते हुए बाबा ने कहा कि, "दम्पति-सम्बन्ध एक पवित्र सम्बन्ध है। सोचना होगा कि कोई किसान बीज बोकर उसे उगने न देना चाहेगा?" टेनिसन ने फिर पूछा, "क्या पति-पत्नी प्रेम के लिए शारीरिक सम्बन्ध जरूरी नहीं?" बाबा ने उत्तर में शुद्ध प्रेम की भूमिका समझायी।

९ मार्च :

आज गुरुद्वारा गये। भागलपुर में २५-३० सिक्ख परिवार हैं। स्वागत में भूदान की सराहना करते हुए एक भाई ने कहा, "मैंने कालेज की पढ़ाई में सर्वोदय-विचार का जब अध्ययन किया था तभी मुझे लगा कि भूदान-आन्दोलन देश की एक महान सेवा है।" बाबा बोले, "गुरु नानकजी ने नाम-स्मरण, कीर्तन, और बाँटकर खाने का उपदेश दिया है। वही काम बाबा कर रहा है। हम-आप दूर नहीं हैं।"

संथाल परगना से जिला ग्रामदान-संयोजक श्री लक्ष्मीनारायण आये और अपने जिले के लिए तीन दिन, २७ से २९ मार्च तक का कार्यक्रम ले गये।

शाम की चर्चा में एक ने पूछा, "सात्विक संतुलित आहार कैसा होगा?" बाबा ने मांस, मादक द्रव्य और मिर्च-मसालों को निषिद्ध बताया। कहा, "मनु ने मांस शब्द की व्याख्या ही की है—मा = मुझे, स = वह, यानी जिसका मांस मैं खा रहा हूँ, वह मुझे खायेगा।" फिर पूछने पर कहा, "लहसुन-प्याज भी जरूरत पड़ने पर औषध के रूप में ही लेना ठीक है।"

१० मार्च :

श्री हनुमानदासजी के पूछने पर कहा, "मुक्ति विद्यालय में शुरू में पारंपरिक चरखा दिया जाय और बाद में एक तकुए का अंबर।"

१२ मार्च :

सर्वश्री मनमोहन चौधरी, राधाकृष्ण व नारायण देसाई आये। सर्व सेवा संघ-प्रबंध-समिति की सांगली में हुई बैठक की रिपोर्ट दी। रात को राधाकृष्ण भाई जरूरी काम से चले गये।

आज संविभागीय आयुक्त श्री कश्यपजी सपत्नीक मिलने आये थे। अभी तक छुट्टी पर थे। बताया कि वर्षों पहले भूदान-यात्रा के समय मैं सहरसा में कलक्टर था, वहाँ आपसे भेंट हुई थी। बाद में श्री कृष्णराजबी और श्री रामजी सिंह उनके दफ्तर में जाकर मिले और तय हुआ कि बाबा के बाँका पड़ाव पर बाँका अनुमंडल के सब सरकारी सेवकों को बुलाया जाय और अब तक हुए ग्रामदान-कार्य का लेखा-जोखा हो। उस समय आयुक्त महोदय भी पहुँचेंगे। संथाल परगना में भी वे दौरे पर जा रहे हैं, वहाँ भी जिला स्तरीय अधिकारियों के साथ ग्रामदान-प्राप्ति अभियान की बात करेंगे।

१३ मार्च :

धनबाद जिलादान का समाचार लेकर वहाँ के खादी भंडार के व्यवस्थापक श्री हरि-शंकरजी, जो जिला ग्रामदान-समिति के संयोजक भी हैं, अपने अन्य सहयोगियों के साथ आये। निवेदन किया कि समर्पण-समारोह के निमित्त धनबाद आने का कार्यक्रम बने। बाबा ने कहा, "वहाँ तो हम जरूर आना चाहते हैं। वहाँ रहकर बंगाल के काम को भी प्रेरणा दी जा सकेगी।" उस समय श्री ध्वजाप्रसाद साहू भी उपस्थित थे।

सर्व सेवा संघ के साथियों से दिन में दो बार चर्चाएँ हुईं।

शाम को भागलपुर विश्वविद्यालय के उपकुलपति डा० विश्वेश्वरप्रसाद आये। बाबा ने इस तरफ ध्यान खींचा कि विश्वविद्यालय की तरफ से क्यों न एक व्यक्ति नियुक्त किया जाय, जो आचार्यकुल के संयोजन का काम करे। उसे पूरा समय इस कार्य में देना होगा। जगह-जगह दौरा करना होगा।

१४ मार्च :

प्रसिद्ध वयोवृद्ध प्राकृतिक उपचारक श्री महावीरप्रसाद पोद्दार मिलने आये। बाबा आजकल आमतौर पर मिलनेवालों से उम्र पूछते हैं, और अपेक्षा रखते हैं कि १०० साल जीने की हर एक की आकांक्षा क्यों न हो? महावीरप्रसादजी ने पूछा, "यदि स्वास्थ्य अच्छा रहा तो उम्र लम्बी होना जरूरी है क्या?" बाबा ने कहा, "उम्र तो लिखी है उतनी रहेगी। परन्तु जो लम्बी उम्र जीते हैं, यानी ८० के पार जाते हैं उनके पास जाकर उनके आहार-विहार का अध्ययन करना वैज्ञानिक होगा।" सातारा (महाराष्ट्र) के श्री सातवलेकर-दंपति को इस सम्बन्ध में एक आदर्श बताया।

एक गरीब छात्र के प्रश्न के उत्तर में बाबा ने कहा, "रात को जल्दी सोकर आठ घण्टा पूरी नींद लेना। इससे सुबह के समय जो ताजे दिमाग से अध्ययन होगा, वह थोड़ा अध्ययन भी ज्यादा पुष्ट होगा। हर रोज पाँच-सात मील पैदल चलना चाहिए। ये दोनों काम बिना खर्च के हो सकते हैं। शरीर और बुद्धि, दोनों का लाभ होगा।"

श्री जोनाथन एक महिला के साथ बी० बी० सी० लंदन की तरफ से भारत में गांधी-शताब्दी के निमित्त फिल्म तैयार करने आये है। उनका मानना है कि विनोबाजी गांधी→

आन्दोलन के समाचार

सिरोही (राज०) जिले में ग्रामदान-अभियान

राजस्थान में ग्रामदान-अभियान का तीसरा चरण सिरोही जिले के पिंडवाड़ा प्रखण्ड में पूर्ण हुआ। गुजरात सर्वोदय मण्डल के अध्यक्ष डा० द्वारकादास जोशी की अध्यक्षता में सरुपगंज में आयोजित १५, १६ मार्च के दो दिन के शिविर में प्रशिक्षित होकर कार्यकर्ताओं की २७ टोलियाँ अभियान के लिए गयीं। कुल ६७ गाँवों में कार्यकर्ता पहुँच पाये, और ३० ग्रामदान प्राप्त हुए। शिविर और अभियान में डा० दयानिधि पटनायक, श्री सिद्धराज ढड्ढा, श्री बद्रीप्रसाद स्वामी, आदि प्रमुख सर्वोदय-नेताओं का मार्गदर्शन एवं सहयोग मिला।

उत्तर प्रदेशदान-अभियान १५ मार्च तक की उपलब्धियाँ

पू० विनोबाजी की उपस्थिति में बलिया जिलादान-समारोह के अवसर पर उत्तर प्रदेश के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं द्वारा किये गये "उत्तर प्रदेश-दान" के संकल्प की पूर्ति की दिशा में प्रदेश के सभी रचनात्मक कार्यकर्ताओं में ग्रामदान-अभियान की त्वरा दिखाई पड़ने लगी है। फरवरी के अन्त तक १३,५४६ ग्रामदान और ७९ प्रखंडदान हुए थे। उसके बाद चलाये गये अभियानों की फलश्रुति, जो १५ मार्च तक हमारे कार्यालय में प्राप्त हुई है, उसके अनुसार गाजीपुर में १२६, फैजाबाद में १२६, आजमगढ़ में ३४४, सहारनपुर में १०९, मेरठ में २५, झाँसी में १२, गोरखपुर में १०० और अलीगढ़ में ५५ ग्रामदान हुए। देवकली (गाजीपुर), बीकापुर (फैजाबाद), बिलरियागंज और महराजगंज (आजमगढ़) का प्रखंडदान पूर्ण हुआ। अतएव १५ मार्च, '६९ तक १४,४४३ ग्रामदान और ८३ प्रखंडदान उत्तर प्रदेश में हुए हैं।

—कपिल भाई

अलीगढ़ जिले में द्वितीय ग्रामदान-अभियान

अलीगढ़ जिले का ग्रामदान-अभियान हाथरस विकास-क्षेत्र में ९ मार्च से १५ मार्च तक चलाया गया। अभियान की पूर्वतैयारी के दौरान श्री चिरंजीलाल बागला डिग्री कालेज के प्रिंसिपल डा० के० एस० सिंहल की अध्यक्षता में आर्यसमाज मंदिर हाथरस में एक शिविर हुआ। शिविर की व्यवस्था में स्थानीय नागरिकों का सराहनीय सहयोग रहा।

शिविर में लगभग ७० कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। शिविर की कार्यवाही प्रिंसिपल डा० के० एस० सिंहल की अध्यक्षता में हुई।

श्री कामतानाथ गुप्त आदि कई सर्वोदय-विचारकों ने पधारकर शिविर को सफल बनाया। दो-दो कार्यकर्ताओं की २६ टोलियाँ पूरे क्षेत्र के १४२ गाँवों में घूमीं। ५४ ग्रामदान प्राप्त हुए।

—नरेन्द्र बहादुर सिंह

उ० प्र० के जौनपुर जिले में प्रथम प्रखण्डदान

तार से प्राप्त सूचनानुसार १७ मार्च को जौनपुर का डोभी प्रखण्डदान घोषित हुआ।

मुरादाबाद में प्रखण्डदान-अभियान

गंगोत्री और हसनपुर प्रखण्डों में ७ से १३ मार्च '६९ तक अभियान चलाये गये। १५० कार्यकर्ताओं ने अभियान में भाग लिया। २४१ गाँवों में से १२४ ग्रामदान प्राप्त हुए। १६ मार्च '६९ की सूचना के अनुसार दोनों प्रखण्डों का प्रखण्डदान पूरा करने की दृष्टि से अभियान जारी है।

ग्रामस्वराज्य-प्रचार पदयात्रा

गत १८ मार्च से हरियाणा के हिसार जिले में सर्वश्री रामेश्वर दासजी तथा हरलाल साहू ने ग्रामस्वराज्य के विचार-शिक्षण के लिए ६ माह की अखण्ड पदयात्रा शुरू की। हिसार से ८ मील दूर स्थित ग्राम लड़वा से यात्रा का समारोहपूर्वक शुभारम्भ हुआ।

तमिलनाडु में शंकरराव देव की पदयात्रा

तमिलनाडु में भूमि-समस्या के कारण मालिक-मजदूरों के आपसी सम्बन्ध बिगड़ गये हैं। घनी आबादी और बड़े-बड़े जमींदारों के कारण मजदूरों की संख्या अधिक है, फलस्वरूप विषमता बढ़ी है। इसके अलावा बड़े-बड़े मन्दिरों के नाम पर हजारों एकड़ भूमि है। तंजावर जिले की स्थिति तो और भी विकट है। इस परिस्थिति का लाभ कम्युनिस्ट उठा रहे हैं और असन्तोष की ज्वाला को भड़का रहे हैं। इन्हीं परिस्थितिजन्य समस्याओं को प्रत्यक्ष समझने और कुछ हल निकालने और तंजावर में जिलादान का वातावरण बनाने के लिए ११ मार्च से ३० मार्च तक तंजावर जिले में शंकरराव देव पदयात्रा कर रहे हैं। (स०प्रे०स०)

तेलंगाना में प्रो० गोरा की शान्ति-यात्रा

स्वतंत्र तेलंगाना राज्य की मांग को लेकर जो अशान्ति वहाँ हुई, उस अशान्ति-शमन के लिए सुप्रसिद्ध नास्तिक कार्यकर्ता प्रो० गोरा ने अपने सहयोगियों के साथ तीन सप्ताह की शान्ति-यात्रा कृष्णा, नलगोंडा और वरंगल जिले के देहातों में की।

अप्पासाहब पटवर्धन की चलनशुद्धि पदयात्रा

इन दिनों नागपुर-विदर्भ क्षेत्र में अप्पासाहब पटवर्धन की चलनशुद्धि-प्रचारार्थ पदयात्रा चल रही है। २४ मार्च को नागपुर जिले से वर्धा जिले में उनकी पदयात्रा का शुभारम्भ होगा।

→मार्ग पर महत्त्वपूर्ण शोधकार्य कर रहे हैं, इसलिए उनके काम का फिल्म में जरूरी स्थान है। बाबा से मिलने जब वे आये थे तो मजेदार प्रश्न पूछा—"मान लें, आपकी विनोबा से मुलाकात हो, तो आप क्या प्रश्न पूछेंगे ?" इन दोनों का झुकाव ईश्वर-खोज की ओर दिखा। वे लंदन से श्री सतीशकुमार का परिचय-पत्र भी लाये थे।

सर्वश्री डा० रामजी सिंह, अध्यक्ष तरुण-शांति-सेना, जागेश्वर मंडल, अध्यक्ष जिला पंचायत परिषद्, अतुल्य बाबू, जिला शिक्षा-अधिकारी, गिरधर बाबू आदि सतत प्रखंडों में जाकर प्राप्ति-कार्य को जागृत करते रहते हैं। क्षेत्र में करीब ३० संस्थागत कार्यकर्ता हैं। मदद में सब शिक्षक, सरकारी सेवक और पंचायत के लोग हैं।०

भूदान-यज्ञ १ ३-'६९ रजिस्टर्ड नम्बर एल. ६१४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] लाइसेन्स नम्बर ए १४

www.vinoba.in

बिहारदान के बाद की व्यूह-रचना का शुभारम्भ

सन् '७२ तक ग्राम-प्रतिनिधित्व का स्वप्न साकार करने हेतु लोक-शिक्षण की एकाग्र-साधना के लिए कार्यकर्ताओं का संकल्प

आचार्य राममूर्ति की अपील पर ३७ कार्यकर्ताओं का तत्काल निश्चय

श्री ध्वजाबाबू द्वारा संस्था की ओर से पूर्ण सहयोग का आश्वासन

हाजीपुर (बिहार)। प्रदेश के प्रमुख कार्यकर्ताओं तथा उत्तर प्रदेश, नेपाल से आये हुए कुछ कार्यकर्ताओं के राष्ट्रीय गांधी-शताब्दी समिति के तत्त्वावधान में आयोजित एक सप्तदिवसीय शिविर में 'प्रदेशदान' के बाद के कार्यक्रमों पर विस्तार से चर्चाएँ हुई। शिविर में भाग लेनेवाले कुल ११७ कार्यकर्ताओं ने यह महसूस किया कि चूँकि बिहारदान की मंजिल करीब है, इसलिए 'प्रदेशदान' के बाद लोक-शिक्षण और ग्राम-संगठन के आधार पर ग्राम-प्रतिनिधित्व के लिए पूर्वतैयारी का शुभारम्भ करने का वक्त आ गया है। इस काम के लिए अपने को समर्पित करनेवाले सक्षम कार्यकर्ताओं के लिए आचार्य राममूर्ति द्वारा अपील किये जाने पर तत्काल ३७ कार्यकर्ताओं ने अपना संकल्प घोषित किया। जिस उत्साहवर्धक और प्रेरक वातावरण में यह शुभारम्भ हुआ, उससे आशा बँधती है कि यह क्रम तेजी से आगे बढ़ेगा।

श्री ध्वजा बाबू ने यह आश्वासन दिया कि लोक-शिक्षण का काम करने के लिए संकल्पित बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ के कार्यकर्ताओं को संघ की ओर से पूरी अनुकूलता प्रदान की जायगी।

(शिविर की पूरी रिपोर्ट अगले अंक में पढ़ें)।

चन्द्रपुर जिले में २६ ग्रामदान

महाराष्ट्र के चन्द्रपुर जिले की पदयात्रा में ग्रामदान-प्राप्ति का कार्य २२ फरवरी से ३ मार्च तक धानोरा प्रखण्ड में हुआ। फलस्वरूप २६ ग्रामदान मिले, ६० रुपये की साहित्य-बिक्री हुई। (स०प्रे०स०)

जलगाँव जिले में किसान-शिविरों का आयोजन

जलगाँव जिला सर्वोदय-मण्डल के संयोजक श्री नन्दलाल काबरा ने जिले के विभिन्न स्थानों पर किसान-शिविरों का आयोजन किया। पाचोरा तहसील के वरखेड़ी के शिविर में डेढ़-दो सौ किसान भाइयों ने भाग लिया। नगरदेवले, लोहटार, पिंपलगाँव हरेश्वर में भी शिविर हुए। इन किसान-शिविरों में मराठी साप्ताहिक "साम्ययोग" के सम्पादक श्री वसन्तराव बोंबटकर, एम० एल० ए० श्री सुपडू पाटील आदि कार्यकर्ताओं का भी मार्गदर्शन मिला। (स०प्रे०स०)

छतरपुर में कार्यकर्ता नवसंस्कार शिविर

मध्यप्रदेश गांधी-स्मारक निधि तथा प्रदेश की अन्य रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं का एक नवसंस्कार शिविर छतरपुर में प्रदेशीय गांधी-स्मारक निधि के तत्त्वावधान में सम्पन्न हुआ। शिविर में करीब १२० कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। प्रदेशदान के संदर्भ में ग्रामस्वराज्य के काम करने के लिए अधिक क्षमता अर्जित करने और प्रदेश में नयी समाज-रचना की ठोस बुनियाद का निर्माण करने की दृष्टि से कार्यकर्ताओं का यह नवसंस्कार शिविर बहुत ही महत्त्वपूर्ण रहा। शिविर में मध्यप्रदेश सर्वोदय-मण्डल के अध्यक्ष श्री विश्वनाथ खोड़े, म० प्र० गांधी-स्मारक निधि के मंत्री श्री काशिनाथ त्रिवेदी, अ०भा० शांति-सेनामण्डल के मंत्री श्री नारायण देसाई और केन्द्रीय गांधी-स्मारक निधि के मंत्री श्री देवेन्द्र गुप्त आदि ने मार्गदर्शन किया।

जमशेदपुर में काकासाहब कालेलकर

गांधी के विचारों के आधार पर जागतिक और राष्ट्रीयस्तर पर प्रयोग करने की आवश्यकता स्पष्ट है। स्वतंत्रता की रक्षा के लिए तथा आर्थिक, सामाजिक जीवन में क्रान्ति करने के लिए गांधी-विचार और पद्धति पर अध्ययन, मनन और चिन्तन अनिवार्य है। इस दृष्टि से गांधी-शान्ति-प्रतिष्ठान केन्द्र, जमशेदपुर के तत्त्वावधान में एवं जमशेदपुर गांधी-जन्म-शताब्दी समिति के सहयोग से १२ मार्च से १५ मार्च तक नगर के विभिन्न सेवा-संगठनों एवं शैक्षणिक संस्थाओं द्वारा व्याख्यानमालाएँ आयोजित की गयीं। इन अवसरों पर विद्वान मनीषी एवं तत्त्व-चिंतक श्री काकासाहब कालेलकर मुख्य अतिथि एवं वक्ता रहे। —मु० अयूब खाँ

जीवन साहित्य

वैष्णव जन अंक, सम्पादक : हरिभाऊ उपाध्याय, यशपाल जैन, प्रकाशक : सस्ता साहित्य मण्डल, नयी दिल्ली, संयुक्तांक : जनवरी-फरवरी '६६, पृष्ठ : १६०, वार्षिक मूल्य: ५ रुपये। इस अंक का मूल्य : २ रु० ५० पैसे।

विगत तीस वर्षों से प्रकाशित होनेवाले "जीवन साहित्य" ने कुछ ऐसे विशेषांक निकाले हैं, जिनका महत्त्व भविष्य में संदर्भ के लिए बड़ा उपयोगी होगा। गांधी-जन्म-शताब्दी के इस वर्ष में "वैष्णव जन अंक" प्रकाशित कर मण्डल ने स्तुत्य कार्य तो किया ही है, साथ ही महात्मा गांधी के दार्शनिक जीवन का सार संकलित कर अपनी भावांजलि भी अर्पित की है, जो कि सर्वथा उपयुक्त ही है। देश के वरिष्ठतम विद्वानों एवं प्रसिद्ध लेखकों के लेखों से सुसज्जित यह अंक, भाषा और शैली की दृष्टि से भी, काफी सुन्दर बन पड़ा है। लेखों का स्तर, सामग्री तथा प्रकाशन की दृष्टि से इतना अच्छा अंक निकालने के लिए सम्पादकों को बधाई!

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति : २० पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित।